‘हमारा शहर उस बरस’ : कथ्य और शिल्प’

‘HAMARA SHAHAR US BARAS’ : KATHYA AUR SHILP’

अनुसंधित्सु

हेमलता

Research Scholar

Hem Lata

हिंदी-विभाग

मिज़ोरम विश्वविद्यालय

आइज़ॉल - 796004

Department of Hindi

Mizoram University

Aizawl - 796004

2017

‘हमारा शहर उस बरस’ : कथ्य और शिल्प’

शोध-निर्देशक
प्रो0 सुशील कुमार शर्मा
आचार्य एवं अध्यक्ष

अनुसंधित्सु
हेमलता
Registration Number
MZU/M.Phil./304 of 19.04.2016

हिंदी-विभाग

द्वारा

मिज़ोरम विश्वविद्यालय के हिंदी विषय में
मास्टर ऑफ़ फिलॉसफी (एम.फिल.) उपाधि के लिए अपेक्षित
आवश्यकता की पूर्ति हेतु प्रस्तुत ।

प्रो. सुशील कुमार शर्मा
आचार्य एवं अध्यक्ष
हिंदी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आइज़ॉल 796004

केंद्रीय विश्वविद्यालय
A Central University

Prof. Sushil Kumar Sharma
Professor & Head
Department of Hindi
Mizoram University,
Aizawl -796004

(Accredited by NAAC with 'A' Grade)
Mob.-09436105977/09436961337; E-mail: sksharma19672@yahoo.com ; Website : www.mzu.edu.in

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **हेमलता** ने मेरे निर्देशन में **'हमारा शहर उस बरस' : कथ्य और शिल्प'** विषयक लघु शोध–प्रबंध मिज़ोरम विश्वविद्यालय की मास्टर ऑफ फिलॉसफी हिंदी उपाधि हेतु किया है। इनका शोध–कार्य मौलिक है। प्रस्तुत लघु शोध–प्रबंध इनके द्वारा कोई अन्य उपाधि प्राप्त करने के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय / संस्थान में प्रस्तुत नहीं किया गया है।

इस लघु शोध–प्रबंध को मास्टर ऑफ फिलॉसफी हिंदी शोध–उपाधि के मूल्यांकन हेतु अनुमति प्रदान करता हूँ।

S K Sharma

(प्रो० सुशील कुमार शर्मा)
शोध–निदेशक

PROF. SUSHIL KUMAR SHARMA
Dept. of Hindi
MIZORAM UNIVERSITY
AIZAWL - 796004

मिज़ोरम विश्वविद्यालय

आइजॉल

जून – 2017

घोषणा

मैं **हेमलता** एतद् द्वारा घोषित करती हूँ कि इस लघु शोध–प्रबंध की विषय सामग्री मेरे द्वारा किए गए कार्यों का परिणाम है। इस शोध–सामग्री के आधार पर न तो मुझे और जहाँ तक मुझे ज्ञात है, किसी अन्य को उपाधि प्रदान की गई है और न ही यह लघु शोध–प्रबंध मेरे द्वारा कोई अन्य उपाधि प्राप्त करने के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय / संस्थान में प्रस्तुत किया गया है।

इसे मिज़ोरम विश्वविद्यालय के सम्मुख हिन्दी विषय में मास्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि के लिए प्रस्तुत किया जाता है।

अध्यक्ष
अध्यक्ष
हिंदी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आइज़ॉल, मिज़ोरम-796004
Head
Department of Hindi
Mizoram University
Aizawl, Mizoram-796004

शोध–निर्देशक
Prof. SUSHIL KUMAR SHARMA
Dept. of Hindi
MIZORAM UNIVERSITY
AIZAWL - 796004

अनुसंधित्सु

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

प्राक्कथन : i-ii

प्रथम अध्याय : गीतांजलि श्री का व्यक्तित्व और कृतित्व 1 - 25

(क) व्यक्तित्व :

(अ) जन्म (आ) शिक्षा

(इ) व्यवसाय (ई) विवाह

(उ) सम्मान

(ख) कृतित्व :

(अ) उपन्यास - साहित्य (आ) कहानी - संग्रह

(इ) संपादन

द्वितीय अध्याय : 'हमारा शहर उस बरस' का कथ्य 26 - 74

(क) साम्प्रदायिकता (ख) शैक्षिक राजनीति

(ग) धार्मिक राजनीति (घ) जीवन-मूल्य

(ङ) नारी सशक्तिकरण (च) मृत्यु-बोध

तृतीय अध्याय : 'हमारा शहर उस बरस' का शिल्प 75 - 106

(क) भाषा

(अ) शब्द-भण्डार

(i) तत्सम शब्द (ii) तद्भव शब्द

(iii) देशज शब्द (iv) विदेशज शब्द

(v) ध्वन्यात्मक शब्द (vi) यौगिक शब्द

(vii) रूढ़ शब्द (viii) संकर शब्द

(आ) वाक्य-विश्लेषण

(इ) मुहावरे

(ई) लोकोक्तियाँ

(उ) प्रतीक

(ऊ) बिम्ब

(ख) शैली

(अ) वर्णात्मक शैली (आ) विश्लेषणात्मक शैली

(इ) पत्रात्मक शैली (ई) संवादात्मक शैली

(उ) मनोविश्लेषणात्मक शैली (ऊ) आत्मकथात्मक शैली

(ऋ) व्यंग्यात्मक शैली (ए) चित्रात्मक शैली

(ऐ) संकेतात्मक शैली (ओ) पूर्वदीप्ति शैली

(औ) काव्यात्मक शैली (अं) विचारात्मक शैली

उपसंहार **107 - 112**

संदर्भ-ग्रंथ सूची **113 - 115**

प्राक्कथन

साहित्य मानव जीवन की संचित अनुभूतियों का चित्र है । कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबन्ध, संस्मरण आदि के माध्यम से मनुष्य अपनी आंतरिक भावनाओं को अभिव्यक्त करता है । साहित्य हमें वही देता है, जो समाज में घट रहा है । सहृदय पढ़ता है और स्वयं को इससे जुड़ा हुआ महसूस करता हैं । उपन्यास में मानव जीवन का लेखा जोखा प्रस्तुत किया जाता है । जब साहित्यकार लिखता है, तो वह स्वयं को उसी परिवेश से जोड़ता है, जहाँ से उसका जीवन शुरू होता है और अपने भोगे और देखे हुए सच को वह कल्पना का सहारा लेकर रचना में उतारता है । समय के साथ समाज के स्वरुप में भी परिवर्तन होता रहता है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज में ही वह अपने जीवन का आधार तय कर, जीवन के आगे की प्रक्रिया तय करता हुआ समाज में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाता है । गीतांजलि श्री का नाम समकालीन कथा-साहित्य में बहुचर्चित है । प्रखर चेतना की संवाहिका गीतांजलि श्री के पास अनुभव का विपुल भण्डार है । समकालीन यथार्थ को उन्होंने अपने कथा-साहित्य में सूक्ष्म भाषिक संवेदनाओं के साथ अनेक रूपों में अन्वेषित किया है ।

प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध को विषय-प्रतिपादन की दृष्टि से तीन अध्यायों में विभाजित किया गया है ।

प्रथम अध्याय 'गीतांजलि श्री का व्यक्तित्व और कृतित्व' है । इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है । प्रथम उप-अध्याय में 'व्यक्तित्व' के अंतर्गत् गीतांजलि श्री के जन्म, शिक्षा, व्यवसाय, विवाह, एवं सम्मान पर सविस्तार प्रकाश डाला गया है । द्वितीय उप-अध्याय में 'कृतित्व' के अंतर्गत् उनके उपन्यास-साहित्य, कहानी-संग्रह, एवं संपादित रचना का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया गया हैं ।

द्वितीय अध्याय : 'हमारा शहर उस बरस' का कथ्य है । इस अध्याय के अंतर्गत छः उप-अध्याय हैं । प्रथम उप-अध्याय 'साम्प्रदायिकता' के अंतर्गत् साम्प्रदायिकता के कारण एवं परिणामों का विवेचन किया गया है । द्वितीय उप-अध्याय 'शैक्षिक राजनीति' के अंतर्गत् विश्वविद्यालयों में शिक्षा के क्षेत्र में हो रही गंदी राजनीति का वर्णन किया गया है । तृतीय उप-अध्याय 'धार्मिक राजनीति' के अंतर्गत् मठ की आड़ में हो रहे धार्मिक पाखंडों की खोखली राजनीति को विश्लेषित किया गया है । चतुर्थ उप-अध्याय 'जीवन-मूल्य' के अंतर्गत् समाज में हो रहे जीवन-मूल्यों के पतन को विवेचित किया गया है । पंचम उप-अध्याय 'नारी

सशक्तिकरण' के अंतर्गत् केन्द्रीय भूमिका में स्त्री पात्र (श्रुति), अंतर्विरोध की दृष्टि, स्त्री वर्चस्व का दृष्टिकोण आदि को विश्लेषित किया गया हैं । षष्ठ उप-अध्याय 'मृत्यु-बोध' के अंतर्गत् मृत्यु के शाश्वत सत्य को विवेचित किया गया हैं ।

तृतीय अध्याय : 'हमारा शहर उस बरस' का शिल्प है । इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है । प्रथम उप-अध्याय 'भाषा' के अंतर्गत् शब्द-भण्डार, वाक्य विश्लेषण, मुहावरा एवं लोकोक्ति, प्रतीक, बिम्बों का विश्लेषण किया गया हैं । द्‌वितीय उप-अध्याय 'शैली' के अंतर्गत् वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, पत्रात्मक, संवादात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, आत्मकथात्मक, व्यंग्यात्मक, चित्रात्मक, संकेतात्मक, पूर्वदीप्ति, काव्यात्मक एवं विचारात्मक आदि शैलियों को सोदाहरण विश्लेषित किया गया है ।

उपसंहार के अंतर्गत् उपर्युक्त अध्यायों से प्राप्त निष्कर्षों का समाहार एवं समाकलन किया गया हैं ।

यह लघु शोध-प्रबंध प्रोफ़ेसर सुशील कुमार शर्मा, आचार्य एवं अध्यक्ष, (हिंदी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्‌यालय, आइज़ॉल) के निर्देशन में पूर्ण किया गया है । पूज्य गुरुवर का स्नेहाशीष, सतत प्रेरणा और सत्परामर्शों के फलस्वरूप ही यह कार्य पूर्ण हो सका है । मैं उनके प्रति विशेष कृतज्ञता का अनुभव कर यह कामना करती हूँ कि उनका आशीर्वाद मुझ पर सदा बना रहे । प्रोफ़ेसर संजय कुमार, डॉ. सुषमा कुमारी, डॉ. प्रीति राय एवं श्री अमिष वर्मा के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिनसे मुझे हमेशा सत्यपरामर्श मिलता रहा ।

मैं डॉ. रवि प्रकाश मिश्र और महेन्द्र गोदारा के प्रति आभार प्रकट करती हूँ, जिन्होंने मुझे शोध कार्य में सहयोग प्रदान किया । मैं अपने सभी मित्र, परिवार जनों एवं शुभचिंतकों की भी आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे इस कार्य हेतु सहयोग प्रदान किया ।

अंत में मैं उन सभी विद्‌वानों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिनकी पुस्तकों एवं आलेखों से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से मुझे सहयोग मिला ।

हेमलता

प्रथम अध्याय

गीतांजलि श्री का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

(क) व्यक्तित्व :

साहित्य समाज का दर्पण है । साहित्य हमें वही देता है, जो समाज में घट रहा है । जब कोई साहित्यकार लिखता है तो वह स्वयं को उसी परिवेश से जोड़ता है, जहाँ से उसका जीवन शुरू होता है और अपने भोगे और देखे हुए सच को वह कल्पना का सहारा लेकर रचना में उतारता है । समय के साथ समाज के स्वरुप में भी परिवर्तन होता रहा है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज में ही वह अपने जीवन का आधार तय कर जीवन के आगे की प्रक्रिया तय करता हुआ समाज में अपनी एक विशिष्ट पहचान कायम करता है । गीतांजलि श्री का नाम समकालीन कथा-साहित्य में बहुचर्चित है । प्रखर चेतना की संवाहिका गीतांजलि श्री के पास अनुभव का विपुल भण्डार है । समकालीन यथार्थ को उन्होंने अपने कथा-साहित्य में सूक्ष्म भाषिक संवेदनाओं के साथ अनेक रूपों में अन्वेषित किया है ।

(अ) जन्म :

"गीताजंलि श्री का जन्म 12 जून, 1957 को उत्तर-प्रदेश के मैनपुरी नामक शहर में हुआ ।"[1] इनकी माता का नाम श्री कुमारी पांडेय और पिता का नाम अनिरुद्ध पांडेय है । इनके पिता एक आई.ए.एस. अधिकारी थे । इनके पिता सिविल-सेवा में होने के कारण उनका तबादला उत्तर-प्रदेश के कई छोटे-बड़े शहरों - मथुरा, अलीगढ़, मुजफ्फर नगर आदि में होता रहा । इस कारण बचपन में ही इन्होंने मध्यवर्गीय जीवन के बारे में बहुत-कुछ सिखा । वे बचपन से ही एक लेखिका बनना चाहती थीं । इनका मूल नाम गीताजंलि पांडेय था । इन्होंने अपनी माँ के सम्मान और स्नेह के कारण 'पांडेय' शब्द हटा दिया । अपनी माँ के नाम का पहला शब्द 'श्री' अपने मूल नाम के पीछे जोड़ लिया और अपना नाम गीताजंलि श्री रखा ।

(आ) शिक्षा :

गीताजंलि श्री की प्रारंभिक शिक्षा उत्तर-प्रदेश के विभिन्न शहरों में हुई । इनकी शिक्षा 'अंग्रेजी' माध्यम से हुई । उस समय यह धारणा थी कि वे ही स्कूल अच्छे हैं जो अंग्रेजी माध्यम के हैं । इन्होंने हिंदी अनिवार्य विषय के रूप में रखा । इन्होंने कला स्नातक लेडी श्री राम कॉलेज, दिल्ली एवं स्नातकोत्तर (इतिहास), जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली से किया । इन्होंने महाराजा सयाजी राव विश्वविद्यालय, बड़ौदा (गुजरात) से 'प्रेमचंद और उत्तर भारत के औपनिवेशिक शिक्षित वर्ग' विषय पर पी-एच.डी की उपाधि प्राप्त की ।

(इ) व्यवसाय :

गीताजंलि श्री स्वतंत्र लेखिका हैं और "दिल्ली में स्थित नाटक ग्रुप 'विवादी' के साथ नाटकों का रूपान्तर और मंचन"[2] का कार्य करती हैं । वे 'प्रतिलिपि' पत्रिका की सलाहकार समिति की एक सदस्य हैं ।

(ई) विवाह :

गीताजंलि श्री ने स्नातकोत्तर के लिए इतिहास विषय को चुना । परिवार के लोगों को आशा थी की वह एक आई.ए.एस. अधिकार बनेगी । इनके पिता ने पहली बार इन्हें अपने पास इनके जन्मदिन पर बुलाया और एक सौ का नोट देकर कहा कि तुम आई.ए.एस. की परीक्षा में बैठो और अपनी मर्जी से किसी भी आई.ए.एस. अधिकारी से शादी कर सकती हो लेकिन लड़का ब्राह्मण होना चाहिए । यह बात सुन कर इन्होंने पैसे वहीँ पर रख दिए और चुपचाप चली गई । इन्होंने अपनी मर्ज़ी से सुधीर पंत से विवाह किया । सुधीर पंत एक इतिहासकार हैं ।

(उ) सम्मान :

गीताजंलि श्री को साहित्य-सेवा के लिए विभिन्न सम्मान और पुरस्कार से नवाज़ा गया है । जो इस प्रकार हैं -

(1) यू. के. कथा सम्मान, उन्हें अपने कहानी संग्रह 'अनुगूँज' के लिए प्रदान

किया गया (1995)

(2) इंदु शर्मा कथा सम्मान (1998)

(3) हिंदी अकादमी साहित्यकार सम्मान (2000)

(4) द्विजदेव सम्मान (2004)

(5) कृष्ण बलदेव वैद सम्मान (2013)

गीतांजलि श्री का व्यक्तित्व अनेक संभावनाओं से ओत-प्रोत है । सम सामायिक घटनाओं को रेखांकित करना आपके व्यक्तित्व का अंग है । शशिभूषण द्विवेदी के अनुसार - "अजीब तरह का फक्कड़पन, एक अजीब तरह की रवानी, लेकिन ये सारी अजिबियतें ही उनके कथाकार को एक व्यक्तित्त्व प्रदान करती हैं ।"[3]

(ख) कृतित्व :

गीताजंलि श्री विविधोन्मुखी प्रतिभा की धनी हैं । इनके कथा-साहित्य में जीवन और उसके विविध पहलुओं के मध्य अद्भुत तारतम्य है । वे अपनी रचनाओं को नए अंदाज में लिखती हैं । जब वे सूरत 'सेंटर फॉर सोशल स्टडीज' पोस्ट-डॉक्टरल अनुसंधान के लिए गईं तो वहीं रहते हुए, इन्होंने अपना कथा-साहित्य लेखन आरम्भ किया । इनकी पहली कहानी 'बेल-पत्र' (1987), 'हंस' पत्रिका में प्रकाशित हुई । बचपन में ही इन्होंने अपने आस-पास देखा की समाज में किस प्रकार की शिक्षा लड़कियों को दी जा रही थी । किस तरह उनको नसीहत दी जाती, जिस के लिए उन्हें तैयार किया जाता । इन सब के खिलाफ तरह-तरह के कुछ विद्रोह उनके अन्दर पक रहे थे । ये ही सब बातें इन्होंने अपनी रचनाओं में विभिन्न घटनाओं के माध्यम से व्यक्त की हैं ।

विश्वविद्यालय के समय इनके बहुत से साथी थे । वे छात्रावास में रहने की अपेक्षा कमरा किराए पर लेकर रहना ज्यादा पसंद करते थे । इन्होंने भी उसी समय कमरा किराए पर लिया । उस समय उन्होंने देखा की जवान लड़कियाँ जो कमरा किराए पर लेती थीं । उनसे कई सवाल पूछे जाते थे । उनसे कहा जाता था कि हर बात की जानकारी मकान मालिक को देनी होगी । कब वे घर

पर आएँगीं, कब जाएँगीं, कौन-कौन उनसें मिलने के लिए आते हैं । ये सब बातें अन्दर ही अंदर इनको उकसा रही थीं, गुस्सा दिला रही थीं । पूरी स्थिति का समावेश एक सामाजिक सोच को लेकर बहुत कुछ इनके अन्दर उत्पन्न हो रहा था और इन सब को मिलाकर इन्होंने उपन्यास, कहानियों की रचना की ।

गीताजंलि श्री साहित्य की छात्रा नहीं थीं । न ही इन्होंने हिंदी साहित्य की शिक्षा कोई विशेष प्रक्रिया के तौर से प्राप्त की । इन्होंने जो कुछ भी साहित्य के बारे में पढ़ा अपने-आप पढ़ा । जिस कारण जब इन्होंने तय किया कि लेखन कार्य हिंदी साहित्य में करना है, तो इन्हें काफी दिक्कतें आई । इन्होंने नए सिरे से हिंदी सीखी और हिंदी साहित्य को पढ़ा । इन्होंने हिंदी लेखन कार्य शुरू करने से पहले हिंदी साहित्य के साथ, अंग्रेजी साहित्य, रूसी साहित्य, जापानी साहित्य, विक्टोरियन साहित्य और ब्लैक इंडियन साहित्य भी खूब पढ़ा ।

गीतांजलि श्री के चार उपन्यास प्रकाशित हैं - 'माई' (1993), 'हमारा शहर उस बरस' (1998), 'तिरोहित' (2001), 'खाली जगह' (2006) । गीतांजलि श्री के तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित हैं - 'अनुगूँज' (1991), 'वैराग्य' (1999), 'यहाँ हाथी रहते थे' (2012) । इन्होंने संपादन की दिशा में भी सराहनीय कार्य किया है । इनकी सम्पादित कृति है - 'अज्ञेय कहानी संचयन' (2012) । ये नई दिल्ली में स्थित नाट्य संस्था 'विवादी' तथा 'नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामा' में पटकथा लेखक के रूप में जुडी हैं । 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास को 2011 में 'नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामा' द्वारा रंगमंच पर प्रस्तुत किया गया । इनके उपन्यासों के अनुवाद अनेक भाषाओं में हुए हैं - अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, सर्बियन, बांग्ला, गुजराती, उर्दू । इनका पहला उपन्यास 'माई' का अंग्रेजी अनुवाद 'काली फॉर वीमेन' (2002) का नीता कुमार ने किया । 'काली फॉर वीमेन' को साहित्य अकादमी पुरस्कार से भी नवाजा गया । 'तिरोहित' उपन्यास का अंग्रेजी में अनुवाद राहुल सोनी ने 'द रूफ बिनीथ देयर फीट' (2013) में किया । 'खाली जगह' का अनुवाद अंग्रेजी में निवेदिता मेनन ने 'द एम्प्टी स्पेस' (2011)किया ।

(अ) उपन्यास - साहित्य :

"उपन्यास शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है - उप+न्यास । 'उप' का अर्थ है - समीप और 'न्यास' का अर्थ है - रखना । इस तरह 'उपन्यास' का शब्दगत

अर्थ है - 'समीप रखना' या (मनुष्य) के निकट रखी हुई वस्तु अर्थात् वह वस्तु या कृति जिसको पढ़कर लगे की वह हमारी ही है, इसमें हमारे ही जीवन का प्रतिबिम्ब है, इसमें हमारी ही कथा हमारी ही भाषा में कही गयी है ।"[4] उपन्यास में मानव जीवन अपेक्षाकृत अधिक समीपता के साथ चित्रित होता है । यह मानव जीवन के आंतरिक एवं बाहरी जीवन की एक पूर्ण व्यापक झाँकी प्रस्तुत करने का सशक्त माध्यम है ।

समकालीन हिंदी उपन्यासों में महिला लेखिका, अपनी एक नयी पहचान लेकर हिंदी कथा-साहित्य में आईं । समग्र हिंदी साहित्य जगत ने एक स्वर से माना है कि हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श सम्बन्धित साहित्य अब पूर्णत: परिवर्तित हो गया है । समय के बदलते रूप, और आवश्यकता के कारण साठ के दशक के बाद हिंदी साहित्य में महिला लेखिकाओं का आगमन बड़ी तेजी से हुआ और सदी के अंत तक आते-आते हिंदी साहित्य में इनकी संख्या बढ़ी और उपन्यासों में एक वैचारिक परिवर्तन हुए । यही वैचारिक परिवर्तन इनको हिंदी साहित्य में उच्च शिखर पर ले गए ।

समकालीन हिंदी उपन्यास लेखन के माध्यम से अनेक महिला लेखिकाओं ने नारी जीवन के विभिन्न प्रश्नों, उनके उत्पीड़न के साथ उनको नया रूप दिया, साथ ही उनकी अस्मिता की ऊँचाइयों के साथ उनको रेखांकित किया । समकालीन महिला लेखिका समाज में ही नहीं बल्कि हिंदी साहित्य में भी अपनी स्वायत्तता स्थापित करना चाहती हैं । रूढ़िवादी संस्कारों के पीछे अपनी आँखे बंद करके चलने की बजाए इन्होनें अपनी समस्याओं को अपनी लेखनी द्वारा सफलता पूर्वक सबके सामने उजागर किया । 'चाक', 'आवां', 'माई', 'छिन्नमस्ता' आदि उपन्यासों इनके निदर्शन हैं । जिनमें स्त्री-विमर्श की आतंरिक पीड़ा को उजागर किया है । समकालीन उपन्यास 'इदन्नमम', 'तिरोहित', 'हमारा शहर उस बरस' जैसे उपन्यासों में उत्तर -आधुनिकता की आहाट भी सुनाई पड़ती है ।

समकालीन हिंदी उपन्यास के क्षेत्र में गीताजंलि श्री एक अलग मुहावरा ले कर सामने आई हैं । इन्होनें हिंदी कथा-साहित्य में कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर अपनी अलग पहचान बनाई है । इनका कथा साहित्य एक अलग स्त्री-विमर्श को रेखांकित करता है । यद्पी वे स्त्री-विमर्श की घोषित विमर्शकार नहीं

हैं तथापि इन्होनें अपने कथा-साहित्य में स्त्री-विमर्श को नई दिशा और नये आयाम दिये हैं ।

(i) माई

'माई' गीतांजलि श्री का पहला उपन्यास है । यह उपन्यास 1993 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है । 'माई' एक लघु उपन्यास है । प्रस्तुत उपन्यास में मुख्य पात्र 'माई' को केंद्र बिंदु बनाकर, पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण लगातार शोषित हो रही लाखों माईयों का रेखांकन किया है । उपन्यास में कुल छह पात्र हैं - दादा, दादी, बाबू, माई, सुनैना और सुबोध (भाई-बहन) । दादा ड्योडी के बाहर अपना हुक्म चलाते हैं तो दादी ड्योडी के अंदर अपना हुक्म माई पर चलाती हैं । बाबू अपने में ही सीमित स्वत्व विहीन व्यक्ति है । जैसे-तैसे उन्होंने अपनी इंजीनियरिंग में डिप्लोमा हासिल किया और शहर के नामी औद्योगिक काम्प्लेस में नौकरी प्राप्त की । माई सबकी की आज्ञाकारी है । सबकी देखभाल करना, उनकी सेवा करना माई का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है । माई सबका ध्यान रखने में इतनी व्यस्त हैं कि उसकी कमर झुक गई है । इन सब के बावजूद माई अपने दैनिक कार्य की दिनचर्या में व्यस्त हैं । सुबोध और सुनैना दोनों ही आधुनिकतम विचारों की पहचान हैं, जो ड्योडी के अन्दर नहीं बल्कि उसके बाहर जीना चाहते हैं । उपन्यास में सुनैना ने अपनी स्मृति के सहारे अपनी माई को केंद्र में रख कर, अपने परिवार की अन्तरंग कथा कहती है । इस प्रकार लेखिका उपन्यास में एक सामन्तीय परिवार की तीन पीढ़ीयों की नारी चेतना की कथा पाठकों के सामने प्रस्तुत करती है । पहली पीढ़ी, दादी ड्योडी की सीमाओं में कैद है, परंतु अपने में संतुष्ट है । दूसरी पीढ़ी, माई ऊपर से शांत, सबकी सेवा करने वाली परन्तु भीतर ही भीतर सुलग रही है । तीसरी पीढ़ी, सुनैना ड्योडी के अन्दर नहीं बल्कि ड्योडी से बाहर निकलना चाहती है ।

माई की चुप्पी और लगातार सबके सामने झुकी रहने के कारण पितृसत्तात्मक व्यवस्था की प्रतीक ड्योढ़ी के आंतरिक आतंक में दोनों के बीच एक संघर्ष चलता रहता है ।

दादा-दादी की दादागिरी और बाबू का दब्बूपन और नीचे-नीचे चलती बाबू की अय्यासी, ये सब माई की स्वीकृति के कारण ही ड्योढ़ी के अंदर सुचारू रूप से क्रियाशील है । पितृसत्ता व्यवस्था ने माई को ऐसा कठोर बना दिया कि वह हमेशा झुकी हुई रहती है । वह बहुत कम बोलती है । उसका काम कभी रुकता नहीं, सुबह से लेकर रात तक सारे काम माई को ही करने होते हैं । सुबह उठकर घर की झाड़ू-बुहारी करना, चक्की चलाना, खाना बनाना, परोसना, बर्तन-साफ़ करना, पानी भरना, बिस्तर बिछाना, कपडे धोना, बच्चों को जगाना, खिलाना-पिलाना, सुलाना आदि सारे काम माई को ही करने होते हैं । इन सब कामों को करते-करते माई की कमर झुक गई । दर्द के कारण फिर भी माई मौन है, सह रही है । इन सब के साथ दादी के तानों को भी सह रही है । शायद माई झुक कर काम कर रही है, ताकि ड्योडी की नाक कही नीची न हो जाए । ये नहीं है कि माई शिक्षित नहीं है । माई शिक्षित है और उच्च शिक्षा प्राप्त है । पितृसत्ताधारियों के लिए उनका शिक्षित होना या न होना कोई मायने नहीं रखता । जब बाबू माई को क्लब लेकर जाते हैं, परन्तु माई का एम.ए. पास होना ही, बाबू के लिए शर्म की बात बन जाता है ।

दादा चाहते हैं कि सुनैना अंग्रेजी सीखे परन्तु अंग्रेजी बोले नहीं । अंग्रेजी ही नहीं बल्कि हिंदी भी न बोले । सुनैना में इतना भी साहस नहीं होता कि वह अपने दादा की आँखों में आँखें डाल कर ड्योडी के बाहर जा सके, खेल सके । दादा की नज़रों में सुनैना और सुबोध के लिए अलग-अलग नियम हैं । जहाँ सुनैना ड्योडी के बाहर नहीं जा सकती, वहीं सुबोध बाहर हॉस्टल में रहता है । माई के लिए तो दोनों ही एक समान हैं । भले ही माई मौन है अपने लिए नहीं लड़ती परन्तु माई के अंदर साहस और हिम्मत भी है, जिस कारण वह दोनों बच्चों को दादा-दादी से छुपाकर पिछले दरवाजे से बाहर खेलने के लिए निकाल देती है । उनके जायज और नाजायज कार्यों को, उनके व्यवहारों को, बातों को अपने मौन की ओट में छिपाकर उन दोनों को हर खतरे से बचाती है ।

सुनैना और सुबोध दोनों का लक्ष्य है - माई को ड्योडी की कैद से आजाद करना है । दादा-दादी की मृत्यु के बाद ही माई ड्योढ़ी की सीमा से बाहर आती

है । माई का ड्योडी से बाहर आना किसी के प्रयत्न से नहीं होता, बल्कि व्यक्ति के न रहने से होता है ।

अंत में सुनैना जो की आधुनिक विचारधारा से प्रभावित है, कहती है - मैं, माई नहीं बनना चाहती जो सर झुकाए, आँखें जमीन पर गड़ाए, दूसरों की सुने, दूसरों की मर्जी से चले । स्वयं की कोई अस्मिता ही न हो । इस कारण सुनैना चली जाती है विदेश, ड्योडी की सीमा को लाँघते हुए ।

(ii) हमारा शहर उस बरस :

गीताजंलि श्री का दूसरा उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' सन् 1998 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ । प्रस्तुत उपन्यास बाबरी मस्जिद विध्वंस की घटना से प्रभावित है । इस उपन्यास को लेखिका ने साम्प्रदायिकता और उसके भय को केंद्र में रख कर लिखा है । उपन्यास में न तो काल निर्धारित है, न ही कोई स्थान का उल्लेख किया गया है । 'हमारा शहर' कोई भी हो सकता है 'उस बरस' कभी ही हो सकता है ।

लेखिका ने हिन्दुत्ववादी साम्प्रदायिकता का चित्रण बहुत प्रभावशाली रूप से किया गया है । उपन्यास में एक शहर और उस शहर में एक मठ, एक विश्वविद्यालय है, जो साम्प्रदायिक तनाव को अपनी राजनीतिक गतिविधियों से और अधिक तेज करते हैं । उपन्यास में ददद्दू, श्रुति, हनीफ़, शरद, प्रो.नंदन आदि प्रमुख पात्र हैं । ददद्दू, धर्म-निरपेक्षता के चरित्र में है । ददद्दू के अतिरिक्त सभी पात्र प्रतीकात्मक चरित्र में हैं । जो सांप्रदायिक दंगों के विभिन्न पक्षों को प्रकाश में लाने का प्रयास करते हैं । हनीफ़ और श्रुति दोनों पति-पत्नी हैं । शरद दोनों का दोस्त है । शहर का 'मठ' सांप्रदायिक शक्ति का केंद्र है । शहर में दंगे करवाना, जुलूस निकालना, भड़काऊ भाषण देना, लोगों को दूसरे समुदाय के प्रति भड़काना आदि सारी गतिविधियाँ 'मठ' के द्वारा ही संचालित होती हैं । परिणाम स्वरुप शहर में तनाव पैदा होता है । लोग अपने ही घरों में सुरक्षित नहीं होते । उनके मन में भय और आतंक का डर रहता है । 'मठ' के पास एक विश्वविद्यालय भी है, जो सांप्रदायिक तनाव का फायदा उठाता है । शिक्षा की आड़ में अपनी राजनीतिक गतिविधियों द्वारा साम्प्रदायिकता की आग में घी

डालता है । विश्वविद्यालय के समाजशात्र विभाग में विभागाध्यक्ष नंदन, विभाग को दंगों के कारणों की जाँच और उसके परिणाम की रिपोर्ट तैयार करने के लिए कहता है । इसी विभाग में शरद और हनीफ़ भी प्रोफ़ेसर हैं । रिपोर्ट अखबार में छपती है । शरद को हिन्दू होने के कारण, उसे छोड़ दिया जाता है और हनीफ़ को मुसलमान होने के कारण, साम्प्रदायिक ताकतों का सारा आक्रोश हनीफ़ को अपना लक्ष्य बनाता है । उसको अनेक प्रकार से मानसिक यातनाएँ दी जाती हैं । विभागाध्यक्ष नन्दन इस परिस्थिति का लाभ उठाने के लिए विभाग में हनीफ़ के खिलाफ कुचक्र रचता है । विभाग के सभी कर्मचारियों को हनीफ़ के विरुद्ध भड़काता, यहाँ तक की उसके दोस्त शरद को भी । विद्यार्थियों को हनीफ़ के खिलाफ कर देता है । छात्र यूनियन हनीफ़ को विभाग से हटाने का रिजोल्यूशन पास करती है । हनीफ़ अकेला हो जाता है ।

दूसरी तरफ 'मठ' में महंत की हत्या हो जाती है । उसे शहीद बना दिया जाता है । पूरी घटना को राजनीतिक रंग दिया जाता है । शहर में अशांति का माहौल पैदा होता है । पुलिस हनीफ़ को संभल कर रहने का सुझाव देती है । शहर में जगह-जगह दंगे होने लगते है । सारा माहौल उस बरस का दम घोंटू हो जाता है । गीताजंलि श्री के उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में साम्प्रदायिक विमर्श के बहाने हिन्दू-मुस्लिम संबंधों के उन सभी पहलुओं पर प्रकाश डालती है । जिनकी वजह से इन दोनों समुदाय में विध्वंसात्मक प्रवृतियाँ जन्म लेती हैं। ।

(iii) तिरोहित :

गीताजंलि श्री का तीसरा उपन्यास 'तिरोहित' सन् 2001 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ । 'तिरोहित' उपन्यास में मध्यवर्गीय समाज की कहानी को प्रस्तुत किया गया है । लेखिका ने इसकी कथावस्तु में नारी अस्मिता से जुड़े विभिन्न पक्षों पर भी प्रकाश डाला है । इस उपन्यास में नारीवादी हिंसा का चित्रण किया गया है । हमारे भारतीय समाज में नारी पर पुरुष-सत्ता सदैव हावी रही है । नारी भोगवाद, अन्याय, शोषण का शिकार बनती है । जिसके परिणाम स्वरुप कभी-कभी वह इन सब अन्याय के खिलाफ विद्रोह भी कर बैठती है । इस उपन्यास में लेखिका ने विद्रोह के साथ-साथ, उपेक्षित और शोषित स्त्री से स्त्री की सहानुभूति के सम्बंधो का भी वर्णन किया है ।

इस उपन्यास में तीन प्रमुख पात्र हैं - बिटवा, ललना और चच्चो (बहन जी) । कथानक में एकमात्र महत्वपूर्ण पुरुष पात्र 'बिटवा' है । बिटवा की माँ ललना है । ललना बिटवा को जन्म जरुर देती है, पर उसकी माँ नहीं बन पाती । उसका लालन-पालन ललना की सहेली बहन जी करती है । जिसे वह चच्चो कहता है । बचपन से ही वह चच्चो को अपनी माँ के रूप में देखता है । जितना लगाव बिटवा को चच्चो से है, उतना ही अलगाव ललना से है । उसे दुःख होता है कि उसका जन्म ललना की कोख से क्यों हुआ, चच्चो की कोख से क्यों नहीं हुआ । चच्चो की मृत्यु बिटवा को अंदर से तोड़ देती है । हर पल, हर घड़ी, घर के कोने-कोने से उसे चच्चो की स्मृतियाँ घेरे रहती हैं । इस उपन्यास की कथावस्तु, इन्हीं स्मृतियों के घटनाक्रम पर आधारित है ।

विजय मोहन सिंह का मानना है कि - "वर्णन पद्धति घटनाओं तथा दृश्यों को चाक्षुष रूप में प्रस्तुत करने वाली है - यानि जहाँ सब कुछ होता हुआ दिखाई पड़े, किन्तु यह दिखाई पड़ना भी बहुत प्रत्यक्ष नहीं होता, बल्कि सब कुछ धुँध में घटित होता हुआ ही दिखाई पड़ता है ।"[5] ललना और चच्चो दोनों में गहरी मित्रता है । दोनों के बीच सहानुभूति, मनोगत इच्छाएँ, और वासनाएँ हैं । दोनों के बीच तटस्थ अनुराग है । दोनों का अनुराग काम-प्रेरित हैं । प्रस्तुत उपन्यास में एक लेबरनम हाउस की रहस्यमयी छत है, जो मुहल्ले के तमाम घरों को जोड़ती है । यह छत विशाल खुली सार्वजानिक जगह है । जहाँ चच्चो और ललना दोनों के अंतर्मन घेरों से भर जाती है । उपन्यास में सभी घटनाओं का वर्णन बहुत सूक्ष्म किया गया हैं । 'बीसवीं शताब्दी का हिंदी साहित्य' में विजय मोहन सिंह लिखते है - "औपन्यासिक प्रयोग की दृष्टि से अपेक्षाकृत नई कथाकार, गीताजंलि श्री के 'तिरोहित' में पर्याप्त संभावनाएँ दिखाई पड़ती हैं, इस उपन्यास में उन्होंने उपन्यास के परम्परागत ढांचे से पृथक् एक नई संरचना निर्मित की है ।"[6]

(iv) खाली जगह :

गीताजंलि श्री का चौथा उपन्यास 'खाली जगह' सन् 2006 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ । प्रस्तुत उपन्यास में किसी अनाम शहर का एक अनाम विश्वविद्यालय है । उस विश्वविद्यालय में किसी पाठ्यक्रम से

सम्बंधित कोई प्रवेश परीक्षा होने वाली है । उस परीक्षा के लिए दूर-दूर से छात्र-छात्राएँ आते हैं । उस विश्वविद्यालय में एक कैफे है । बहुत से विद्यार्थी उस कैफ़े में जाते हैं । तभी अचानक उस विश्वविद्यालय के कैफ़े में एक विस्फोट होता है । उस विस्फोट में बहुत से लोग मारे जाते हैं । सारी जगह तहस-नहस हो जाती है । चारो तरफ धुआँ और खून ही खून बिखरा होता हैं । वहीँ उस कैफ़े के एक कोने में, एक खाली जगह में तीन बरस का एक बच्चा, जीवित मिलता है । वही बच्चा इस उपन्यास का नायक है । उस घटना के बीत जाने के बरसों बाद, वह अपने कड़वे अनुभव को बयान करता है । जीवित और मुर्च्छित आवस्था में खून से लथ-पथ वह उस कैफ़े में पड़ा पाया जाता है । उस बच्चे का न तो कोई दावेदार है और न ही उस के बारे में किसी को कोई जानकारी है । वह कौन है, इसके माता-पिता, उसका ठिकाना किसी को कुछ नहीं पता । स्वयं उस बच्चे को भी नहीं पता अपने परिवार वालो के बारे में ।

कैफ़े में मारे गए लोगों में एक अठारह बरस का लड़का भी है, जो प्रवेश परीक्षा देने आया था । जिसकी तलाश में उसके माता-पिता वहाँ उस जगह आते हैं । वे अपने मरे हुए बेटे के बिखरे हुए अवशेषों के साथ-साथ उस जीवित बच्चे को भी अपने साथ ले जाते हैं । उस बच्चे का लालन-पालन वे अपने बेटे की तरह करते हैं । बच्चे का बचपन, उस मृत लड़के की यादों की छाया में, उसकी आदतों में, रुचियों में गुजरता है । उसके माता-पिता उस बच्चे को अपने मृत अठारह बरस के लड़के की जगह देते हैं, बल्कि उसका सारा विकास भी अपने बेटे जैसा करते हैं । जिस कारण वह निरंतर खामोश रहने लगता है । अन्दर ही अंदर घुटता रहता है । अपनी पहचान विहीन जीवन जीने को मजबूर हो जाता है । कुछ समय के बाद, जब वह अठारह बरस का होता है तो वह, माँ-पिता की इच्छा के विरुद्ध, उसी शहर के उसी विश्वविद्यालय में, जहाँ बम-विस्फोट की घटना घटित हुई थी । वहाँ जाने की जिद्द करता है । उसका वहाँ जाने का प्रमुख उद्देश्य अपने बारे में जानकारी हासिल करना है । इसी दौरान परिवार में एक लड़की आती है । वह उससे उम्र में बड़ी है । लड़की उसी शहर की है, जहाँ बम-विस्फोट हुआ था । यही लड़की उसके लिए एक आशा की किरण जगाती है, उसकी अस्मिता को खोजने में । थोड़े ही समय बाद दोनों में दोस्ती हो जाती है । दोनों के बीच अनुराग बढ़नें लगता है । लड़की, उसके माता-पिता को उसकी

सही देख-भाल का आश्वासन दिलाकर उसी शहर में ले जाने के लिए मना लेती है । तभी उपन्यास में एक नाट्कीय मोड़ आता है । लड़का उसी शहर के विश्वविद्यालय के उसी कैफ़े में जाता है । तभी पहले बम-विस्फोट की तरह एक बार फिर वहाँ बम-विस्फोट होता है । फिर वह लड़का जीवत बच जाता है । परन्तु दुर्भाग्यवश वह लड़की उस विस्फोट का शिकार हो जाती है । लड़के के मन में उस लड़की को लेकर एक आशा जगी थी । स्वयं की पहचान प्राप्त करने की परन्तु उस लड़की की मृत्यु के साथ ही उसकी यह आशा भी समाप्त हो जाती ।

(आ) कहानी-संग्रह :

इक्कीसवीं सदी के प्रारंभ में समकालीन महिला कहानीकारों ने जीवन-सन्दर्भ में हो रहे तेजी से परिवर्तनों को अपनी कहानियों का आधार बनाया है । इन कहानीकारों ने तत्कालीन समय के बहुत से विषयों को अपनी कथावस्तु में केन्द्रित कर के कहानियों का सृजन किया है । इन कहानीकारों ने कृषि सम्बन्धी संघर्ष, स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, सांप्रदायिकता-विमर्श, आदिवासी-विमर्श, भूमंडलीकरण और बाज़ारवाद के कारणों को उजागर किया है । इन कहानीकारों ने समय, समाज, राजनीति के यथार्थ तथा मनुष्य एवं उसके अंतर्मन की बैचेनी, भय, अंतर्द्वंद आदि को प्रभावशाली ढंग से अपनी कहानियों में चित्रण किया है । समकालीन हिंदी कहानी की मुख्य विशेषता, कला और भाषा का जिन्दगी के साथ गहरा सम्बन्ध प्रकट करना है । इन कहानीकारों ने समकालीन जिन्दगी के यथार्थ का चित्रण करने के लिए ऐसी भाषा का प्रयोग किया है । जिससे समकालीन कहानी जिन्दगी के यथार्थ के करीब और सजीव लगे । वहीं पर बौद्धिकता का आग्रह भी उन कहानियों में दिखाई पड़ता है और ये कहानियाँ इनका अहम हिस्सा लगती है ।

समकालीन महिला कहानीकारों में गीताजंलि श्री का नाम प्रमुख है । गीताजंलि श्री की 'प्रतिनिधि कहानियाँ' की भूमिका में शशिभूषण द्विवेदी लिखते हैं - "जीवन का एक अद्भुत तारतम्य है । यही तारतम्य गीताजंलि श्री की रचनाशीलता में है । वहाँ जीवन है तो मृत्यु बोध भी । एक कहानी में तो वे यहाँ तक लिखती हैं कि मृत्यु जीवन का ही एक हिस्सा है ।"[7]

इनकी लगभग हर कहानी एक खास लय में लिखी जाने वाली कहानी होती है । गीताजंलि श्री की कहानियों के विषय में कृष्णा सोबती लिखती हैं - "गीताजंलि श्री की कहानियाँ के अपूर्व गद्य और कथ्य की बारीक़ अभिव्यक्ति पाठक के निकट एक अनोखा समय बुनती है ।"[8]

उन्नीसवीं सदी में गद्य में एक नई विधा का विकास हुआ जिसके लिए 'कहानी' शब्द का प्रयोग किया जाता है । कहानी में जीवन के किसी एक अंग या संवेदना की अभिव्यक्ति होती है । कहानी की मूल आत्मा एक संवेदना या एक प्रभाव है, जिसका मूल उद्देश्य कम से कम शब्दों में उस प्रभाव को अभिव्यक्त करना है । एडगर एलन पी ने कहानी की परिभाषा देते हुए लिखा है - "छोटी कहानी एक ऐसा आख्यान है, जो इतना छोटा है कि एक बैठक में पढ़ा जा सके और पाठक पर एक ही प्रभाव उत्पन्न करने के उद्देश्य से लिखा गया हो । वह स्वत: पूर्ण होती है ।"[9] अत: कहानी कथा तत्त्व प्रधान ऐसा खंड प्रबंधात्मक गद्य रूप है, जिसमें जीवन किसी एक स्थिति, एक अंश या तथ्य की संवेदना के साथ स्वत: पूर्ण और प्रभावशाली चित्रण किया जाता है । कहानी में गठन, तीव्रता का विशेष ध्यान रखा जाता है ।

गीताजंलि श्री की कहानियों में एक नयापन और अनोखापन है । उनकी कहानियों में फक्कड़पन और दार्शनिकता का अद्भुत संगम, उनके साहित्य में देखने को मिलता हैं ।

गीतांजलि श्री के तीन कहानी संग्रह प्रकाशित हैं - (i) 'अनुगूँज' (1991) (ii) 'वैराग्य' (1999) (iii) 'यहाँ हाथी रहते थे' (2012)।

(i) अनुगूँज :

'अनुगूँज' गीताजंलि श्री का पहला कहानी संग्रह है । यह संग्रह सन् 1991, में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ । इस कहानी संग्रह में दस कहानियाँ संकलित हैं - 'प्राइवेट लाइफ', 'बेल-पत्र', 'पीला सूरज', 'सफ़ेद गुड़हल', 'तिनके', 'कसक', 'दरार', 'दूसरा', 'हाशिए पर', 'अनुगूँज' । इन दस कहानियों में नई संवेदना है जो विद्रोह और प्रतिशोध को उजागर करते वक्त भी उनको कमजोर हताशा को अनदेखा नहीं करती हैं । लेखिका कहानियों में इशारों

और बिम्बों के सहारे चित्रण करने वाले शिल्प और शिक्षित वर्ग की आधुनिकता मानसिकता को दिखाती है ।

'प्राइवेट लाइफ' कहानी संग्रह की पहली कहानी है । यह कहानी एक पढ़ी-लिखी 30 साल की अविवाहित लड़की की कहनी है । जो बाहर नौकरी करती है । वह अपनी जिन्दगी अपनी शर्तों पर, अपने मनमाने ढंग से जीना चाहती है । जिसमें शांति, काम, अकेलापन, दुकेलापन, दोस्त, रोमांस हो । वह अपनी एक नई दुनिया बनाना चाहती है । यही कारण है कि वह अपने घरवालों को बिना बताएं अकेली बरसाती लेकर रहती है । लेकिन उसकी इसी इच्छा का विरोध उसके घरवाले और समाज करता हैं । उसके साथ मार-पीट की जाती है, ताने मारे जाते हैं । उसे वापिस घर आने के लिए दवाब दिया जाता है ।

'बेल-पत्र' प्रेम और विद्रोह की एक अनोखी कहानी है । यह कहानी पारिवारिक जीवन में साम्प्रदायिक अंतरलय की कहानी है । कहानी की नायिका फ़ातिमा एक प्रगतिशील मुस्लिम स्त्री है । जो हिन्दू युवक ओम से प्यार करती है । परिवार और समाज से लड़कर उससे शादी भी करती है । परन्तु समाज में मौजूद सांप्रदायिकता के काँटे उसे बार-बार लहूलुहान करते हैं । ये काँटे उसके परिवार से लेकर समाज में हर जगह व्याप्त रहते हैं । जिनके कारण उन दोनों का आपस का समायोजन टूटने - बिखरने लगता है । लेखिका ने उनके परिवार के बिखराव को बड़ी बारीकी से अपनी इस कहानी में प्रस्तुत किया है ।

'पीला सूरज' कोरपोरेट जगत की एक बड़ी अधिकारी अपनी कम्पनी के लिए बड़े ग्रांट के चक्कर में आई.एल.ओ. की मीटिंग के लिए 'जिनेवा' जाती है। अचानक उस जगह तेज बारिस होने लगती हैं । तूफ़ान की स्थिति पैदा होने लगती है । वह वहाँ अकेली घबराने और डरने लगती है । उसे वहाँ अजीब-अजीब अनुभव होने लगते हैं - रंगभेद - स्थान भेद । फिर शुरू होता है, अजीबो-गरीब बचपन की स्मृतियों का सिलसिला । 'सफ़ेद गुड़हल' एक पत्नी की कहानी जो नवम्बर की गुलाबी धूप में अपनी शादी से पहले की स्मृतियों को याद करती है । कैसे वह अपने साथी (पति) से छुप-छुप कर मिलती थी । उसका मन तरह-तरह की यादों से घिरा रहता हैं । फिर से वह वैसे ही जीना चाहती है, पर अपने

भाव को अपने पति के सामने व्यक्त नहीं कर पाती । उसे अहसास है जैसा वह महसूस करती है वैसा उसका साथी नहीं करता ।

'हाशिए पर' इस कहानी में लेखिका ने पर्यावरण के बढ़ते हुए असंतुलन की चिंता को व्यक्त किया है । किस प्रकार तेजी से कट रहे पेड़ों की वजह से वातावरण दूषित हो रहा है । लेखिका ने प्रकृति चिंतन का वर्णन किया है । 'अनुगूँज' एक मध्य वर्गीय दम्पति की कहानी है । इस कहानी में लेखिका ने स्त्री मन की कामनाओं और उसकी घुटन को कई आयामों में खोला है - "एक तरफ दूध वाले की सुडौल देह के प्रति उसका आकर्षण है तो दूसरी तरफ पति की व्यस्तता के बीच उसकी अपनी घुटन की कहानी ।"[10] 'दरार' कहानी में बरसात की रात में छत से पानी का टपकना तो एक प्रतीक है, लेकिन हक़ीकत में, पानी का रिसाव स्वंय उसके अपने जीवन में होता है । शशिभूषण द्विवेदी के अनुसार - "एक प्रतीकात्मक कहानी है । जिसे प्रतीकों में ही समझा जा सकता हैं । कहानी का सूत्र वाक्य है कि कोई एक को छोड़कर दूसरे को नहीं चुनता, बस जीवन के परिचितपन से ऊबरकर नए माहौल को चुनता है ।"[11]

(आ) वैराग्य :

गीताजंलि श्री का दूसरा कहानी संग्रह 'वैराग्य' सन् 1999 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित है । इस कहानी संग्रह में कुल पंद्रह कहानियाँ हैं : - 'चौक', 'दहलीज', 'दिशाशूल', 'पंख', 'नाम', 'भितराग', 'मेरी-गो-राउंड', 'अरे गोपीनाथ', 'पिलाकी की माने फय', 'रिश्ता', 'भार', 'जड़े', 'वे तीन', 'शांति-पाठ' 'वैराग्य' ।

'चौक' एक ऐसी लेखिका की कहानी है, जो अपनी अधूरी किताब को पूरा करने के लिए अपने भीड़-भाड़ भरे पारिवारिक वातावारण को छोड़कर शहर से दूर कोई परिचित पाठक (रोबिन) के शांत माहौल वाले घर में आती है । शाम को वह जब बाहर चौक पर घूमने जाती है । चौक का भीड़-भाड़ का माहौल देख कर फिर उसे अपने घर की याद आती है । लेखिका सोचती है कि अधूरी किताब को पूरा करने के लिए कौन-सी जगह ठीक है - शहर से दूर किसी खाली, शांत, और खामोशी घर का कोना या फिर संयुक्त परिवार का भीड़-भाड़ वाला चौक ?

'दहलीज' एक ऐसे युवक की कहनी है । जो अपने ही दोस्त की बीवी के प्रति आकर्षित होता है । उसके सपने देखता है, और कुछ समय बाद सपने से बाहर आ जाता है ।

'दिशाशूल' यह कहानी दो सहेलियों 'अपाला' और 'गुरप्रीत' की है । दोनों बचपन की दोस्त हैं । दोनों में गहरी मित्रता है । दोनों ही अपनी हर बात एक-दूसरे से करती हैं । 'पंख' इस कहानी में एक युवती अपने सहकर्मी मित्र के साथ पास के एक रेस्तरां में खाना-खाने जाती है । वहाँ उन्हें एक नया जोड़ा लड़का-लड़की का मिलता है । युवती उन के क्रिया-कलाप देखती रहती है । वही जोड़ा उनको हर रोज़ मिलने लगता है । उनके क्रिया-कलाप दुनिया से बेखबर है मानों वे अपने ही पंखों पर सवार होकर उड़ रहें है ।

'नाम' शादी के 15 साल के बाद भी एक शादीशुदा महिला अपने प्रेमी का नाम नहीं भूलती । उस महिला के दिमाग पर वह नाम इस कदर हावी है । कोई भी नाम चाहे उसके पति का हो या उसके अपने बच्चे का, एक बार रुक कर मन में सोचती है । क्या नाम है ? फिर उनके नाम लेती है । **'**भीतराग' एक सेवानिवृत्त वृद्ध की संत्रास और उसके सनकीपन की कहानी है । सेवानिवृत्त के बाद गिरधारी जी आराम से अपनी बहु-बेटों के साथ से रहता है । गिरधारी बेवजह अपनी मृत्यु को लेकर आतंकित रहता है । जब उसके गाँव से, उनसे भी ज्यादा उम्र के 'बचवा ठाकुर' आते हैं तो उन्हें जीवन का एक नया अर्थ समझा जाते हैं।

'मैरी-गो-राउंड' उपेन्द्रनाथ सिरोही, अंग्रेजों के ज़माने के एक बड़े अधिकारी थे । अब सेवानिवृत्त है । वे अपनी पुरानी यादों को याद करके, सब लोगों के सामने शेखी मारते हैं । उस ज़माने में किस तरह बड़े अधिकारी का सम्मान किया जाता था । इसको बड़ा चढ़ा के सब को बताता परन्तु उसको यह अहसास भी है कि अब जमाना बदल गया है । 'पिलाकी माने फय' कहानी मध्यवर्गीय जीवन की आर्थिक तंगी से दुखी लोगों की नहीं है, बल्कि यह उस दुःख से उपजे हास्य की कहानी है । 'वैराग्य' एक मर्म स्पर्शी कहानी है । यह कहानी एक छोटी बहन के सामने किस तरह बड़ी बहन तिल-तिल कर मरती है । छोटी बहन, वहीं

हॉस्पिटल में बैठी अपनी दीदी की स्मृतियों को याद करती हैं । ये स्मृतियाँ उन दोनों के बचपन की होती हैं ।

'कसक' कहानी दो सहेलियों की है । ये दोनों बचपन की सहेलियाँ है । दोनों हर क्षेत्र में एक-दूसरे से भिन्न हैं । दोनों में से एक आत्महत्या कर लेती है । दूसरी अपनी स्मृतियों के सहारे पिछली घटनाओं को याद करती है । उसको जानने की कसक है - "क्या था तुम्हारे मन में जब तुम 'उड़ती' हुई नीचे चली आ रही थीं, उस तेरहवीं मंजिल से, क्या तब भी तुम जीवन के भीतर थी ।"[12]

(उ) यहाँ हाथी रहते थे :

गीताजंलि श्री का तीसरा कहानी संग्रह 'यहाँ हाथी रहते थे' सन् 2012 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित है । इस कहानी संग्रह में कुल ग्यारह कहानियाँ हैं - 'यहाँ हाथी रहते थे', 'आजकल', 'इति', 'मैंने अपने आप को भागते हुए देखा', चकरघिन्नी', 'तितलियाँ', 'इतना आसमान', 'लौटती आहट', 'मार्च, माँ और साकुरा', 'बुल्डोजर', 'थकान' ।

'यहाँ हाथी रहते थे' एक ऐसी कहानी है जिसमें एक शहर के शंघाई बन जाने की कथा को व्यक्त किया है । सांप्रदायिक विभाजन रेखा से, शहर दो पाटों में बँटा हुआ है । प्रस्तुत कहानी में एक बूढी औरत अपना सब कुछ मीठी छुरी के साथ छिन जाने के दर्द के साथ रहती है । उसके आशियाने पर एक बड़ा सा रिहायशी अट्टालिका बन जाती है । उस अट्टालिका में एक पुरुष है, जिसके पास सब कुछ है फिर भी वह अजनबियत के साथ जी रहा है ।

'तितलियाँ' और 'बुलडोजर' कहानियों में असमय मौत का भय और दुःख का वर्णन किया गया हैं । 'थकान' कहानी में शादी के बाद प्रेम के अवसान के अवसाद को व्यक्त किया है । साथ ही लेखिका ने जापान के प्राकृतिक-सौन्दर्य का वर्णन किया है ।

'इतना आसमान' में लेखिका ने लगातार हो रही प्रकृति की तबाही और उससे बिछोह के दुःख को व्यक्त किया है । 'मैंने अपने आप को भागते हुए देखा' कहानी का नायक अपने ही दादा के स्थापित नियम-मूल्यों से आक्रांत

रहता है । उसके अंदर हीन भावना है । उसका दादा उससे शारीरिक और सामाजिक रूप से बेहतर है । दादा के मरने के बाद, उसकों मिली विरासत से वह पीड़ित है । वह प्रत्येक स्थिति से भागना चाहता है । एक अनजाना डर उसके मन में दबा हुआ है । वह अपने आप को ही भागते हुए देखता है ।

'चकरघिन्नी' कहानी की नायिका समय के साथ चकरघिन्नी बन जाती है । कहानी में नायिका बदहवास हो कर भाग रही है, उससे न तो अपनी गति की सीमा का पता है, न ही कोई उसका उद्देश्य है पर लगातार वह भाग रही है । 'आजकल' कहानी सांप्रदायिक दंगों और उसके बाद के प्रभाव के भय को व्यक्त करती हुई एक अनोखी कहानी है । कहानी में दो दोस्त है । एक हिन्दू और एक मुसलमान । हिन्दू दोस्त उस बरामदे में बैठा है जो उसके मुस्लिम दोस्त का है । मुस्लिम दोस्त को दंगों के कारण अपना घर छोड़ कर भागना पड़ा था । एक पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार, हिन्दू दोस्त बरामदे में सबके सामने बैठा है क्योंकि यदि कोई देखे तो बस उसी को देखे । उसकी आड़ में मुस्लिम दोस्त घर में घुसता है, ताकि अपने जीवन-भर की जमा-पूँजी अपने साथ ले जा सके । स्थिति की भयावहता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि एक व्यक्ति अपने ही घर में स्वंय का सामान लेने एक चोर की तरह आता है । 'मार्च, माँ और साकुरा' एक सत्तर बरस की माँ की कहानी है, जो जापान में अपने बेटे से मिलने के लिए जाती है । वह पहली बार छुट्टी मनाने घर से बाहर अकेली निकलती है । शुरू में कुछ डरी-डरी, सहमी-सी रहती है । वहाँ की प्रकृति सौन्दर्य को देखकर जीना सिखती है । वहाँ उसका कायान्तरण होता है । मार्च महीने में साकुरा के फूल खिलतें है । वह उनको देखकर नाचती, गाती है । इस कहानी में एक स्त्री का कायान्तरण उसके अंतर्मन से है न की चालू स्त्री से । कायाकल्प कभी-भी हो सकता है । उसकी कोई उम्र नहीं होती है ।

'लौटती आहट' कहानी में लेखिका ने स्त्री के मन की उन अव्यक्त कोनों की ओर इशारा किया है, जिनकी तरफ आमतौर पर किसी का ध्यान नहीं जाता । इसमें स्त्री मन की आंतरिक पीड़ा को व्यक्त किया गया है । 'इति' एक बूढ़े व्यक्ति की कहानी है, जो कभी बड़ा अधिकारी रह चुका है । वह कई बच्चों का

पिता है । वह अपनी सनकीपन की वजह से घर के सदस्यों के लिए भार बन जाता है ।

(इ) संपादन :

'अज्ञेय कहानी संचयन' गीताजंलि श्री की सम्पादित रचना है । यह कृति 2012 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित है । इस कहानी संचय में अज्ञेय की 27 कहानियाँ हैं - 'इंदु की बेटी', जिजीविषा', 'परम्परा: एक कहानी', 'रमन्ते तत्र देवता :', 'बदला', 'हिली-बोन की बत्तखें', 'वे दूसरे', 'पठार का धीरज', 'नगा पर्वत की एक घटना', 'साँप', 'खितीन बाबू', 'नीली हँसी', 'नारंगियाँ', हजामत का साबुन' ।

'अज्ञेय कहानी संचयन' की भूमिका में गीताजंलि श्री लिखती हैं - "अज्ञेय की कहानियों में विषय की गजब विविधिता है, भाषा, शैली की भी । प्रकृति-मानव रिश्ता है । कहीं, रचना प्रक्रिया पर ख्याल, कहीं प्राचीन मिथक कहीं, और देश-विदेश का इतिहास । रूस, चीन, तुर्की, मुल्क का बँटवारा आदम-हउवा, कहाँ-कहाँ ले जाती है जानने, महसूस करने की उनकी ललक और चेतना में, अचेतना में, अचेतन में भी । स्मृति-स्मरण-भ्रम के अवगुन्थन में भी । कोई एक जिसे एक नाम दिया जा सके, जीवन में अपनी विशुध्दता में नहीं होता ।" [13]

बीसवीं सदी के अंतिम चरण और इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ में अनेक प्रतिभाशाली समकालीन महिला लेखिकाओं ने हिंदी 'उपन्यास' साहित्य में बहुत उत्कृष्ट ढंग से लिखा, जो वर्तमान समय और समाज को उद्घाटित करते हैं । इस युग के उपन्यासों में एक नवीन दृष्टि मिलती है । इन उपन्यासों की भाषा नये सन्दर्भों वाली है । समकालीन उपन्यासों की बहुत सी विशेषताएँ हैं जो परम्परागत उपन्यासों से भिन्न हैं । इन उपन्यासों में कथानक, पहले की अपेक्षा अधिक यथार्थवादी होते हैं । इनमें सामाजिक सरोकारों के साथ राजनीतिक एवं आर्थिक मूल्यों की चर्चा भी होती है । बहुत से उपन्यास स्त्री-विमर्श और दलित -विमर्श पर आधारित हैं । जिनमें वे अपने अस्तित्व के लिए जूझती हुई दोयम दर्जे से ऊपर उठती नायिका के केंद्र में होती हैं । इन उपन्यासों में महिलाओं और दलितों की आंतरिक पीड़ा को मुखर रूप में प्रस्तुत किया गया है । फैंटासी

के बदले प्रेम का अधिक यथार्थ एवं व्यवहारिक वर्णन है । इस युग के उपन्यास अलंकारिता और आड़म्बर से परे सरल एवं सहज हैं । इसमें सामान्यत: आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग होता है । इन उपन्यासों में निरंतर प्रयोगधर्मी शैली के साथ स्थानीय शब्दों और मुहावरों का भी अधिक प्रयोग होता है ।

समकालीन महिला लेखिकाओं में मृणाल पांडे, मैत्रेयी पुष्पा, राजी सेठ, चंद्रकांता, प्रभा खेतान, कृष्णा सोबती, चित्रा मुद्गल, ममता कालिया, गीतांजलि श्री आदि प्रमुख हैं । इन समकालीन महिला लेखिकाओं ने आत्माभिव्यक्ति की आकांक्षा के साथ-साथ आत्म सजगता का रेखांकन अपने लेखन में सफल रूप से किया है । इन लेखिकाओं ने अपने लेखन में तत्कालीन समस्याओं को अपनी रचनाओं के माध्यम से जीवन के समस्या ग्रस्त हिस्सों को उजागर करने का सफल प्रयास किया है । इन लेखिकाओं के उपन्यासों में विषयगत नवीनता दृष्टिकोण का साहस और विसगंतियो की पड़ताल बहुत देखने को मिलती है । इन लेखिकाओं ने हिंदी कथा साहित्य को समृद्ध किया है । समकालीनता की वजह से इनमें समानता होते हुए भी, नैसर्गिक विशिष्टता की वजह से सबकी अपनी-अपनी अलग पहचान है और इन पहचानों में गीतांजलि श्री का नाम विशिष्ट है ।

गीतांजलि श्री ने अपने लेखन में वैचारिक रूप से स्पष्ट और प्रौढ़ अभिव्यक्ति के जरिये हिंदी कथा-साहित्य में एक विशिष्ट स्थान बनाया है । इनकी हर कहानी और उपन्यास एक अलग लहजे में लिखी गई है । इनके कथा-साहित्य में फक्कड़पन और दार्शनिकता का अद्भुत् संगम देखने को मिलता है । यहीं अनोखापन इन्हें एक निराला व्यक्तित्व प्रदान करता है । इनका हर लेख परम्परा से हटकर उसमें समाहित भी होता है । गीतांजलि श्री की 'प्रतिनिधि कहानियाँ' की भूमिका में शशिभूषण द्विवेदी लिखते हैं - "गीतांजलि श्री अपनी रचनाओं में इस मिथक को तोड़ती हैं । वे कोई समाधान नहीं देती, न कोई उपदेश बल्कि एक शब्द, एक वाक्य और एक भाव के कई अर्थों, ध्वनियों और छवियों को पकड़ती हैं । वे समकालीन हिंदी साहित्य में प्रतिबद्ध होने के अर्थों में प्रतिबद्ध भी नहीं हैं । हालाँकि वे प्रतिबद्धता का मखौल भी नहीं उड़ाती ।"[14] वे न सिर्फ नए अंदाज का कथा-साहित्य लिखती हैं बल्कि उन्हें परिष्कृत करके

कुछ उनमें नयापन के साथ, उनका निर्माण भी करती हैं । महिला लेखिका होने के कारण, इन्होंने अपने लेखन में 'स्त्री' को केंद्र में रखकर अनेक उपन्यास एवं कहानियाँ - 'माई', 'तिरोहित', 'बेल-पत्र', 'चौक', 'चकरघिन्नी', 'अनुगूँज' लिखी हैं । इनकी रचना का विषय केवल यहीं तक सीमित न रहकर विविध विषयों को अपने में समाहित किये हुए हैं । इन्होंने तेजी से बदलते हुए समाज को बहुत-ही बारीकी से देखते हुए अनेक रचनाएँ लिखी हैं ।

गीतांजलि श्री के कथा-साहित्य में नयी सदी की दहलीज पर कहीं सन्नाटा है और कहीं पर शोर, कहीं अतीत की स्मृतियाँ हैं तो कहीं वर्तमान की संवेदना और कहीं अनागत के सपने हैं । वे एक बेहद संवेदनशील, भाषा-संपन्न, सशक्त और कुछ विशिष्ट अंदाज़ की लेखिका हैं ।

विशेषताएँ :

गीतांजलि श्री के कथा-साहित्य की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

(1) **अमूर्त्त चिंतन प्रवृत्ति** : गीताजंलि श्री के कथा-साहित्य में अमूर्त्त चिंतन प्रवृत्ति का प्रयोग हुआ है । 'हमारा शहर उस बरस', 'खाली जगह' ऐसे उपन्यास हैं, जिनमें न शहर का नाम है, न ही काल निर्धारित है । 'प्राइवेट लाइफ', 'दिशाशूल', 'कसक', 'चौक', आदि कहानियों में पात्रों के नाम, समय, स्थान का जिकर भी नहीं है ।

(2) **आधुनिकता, उत्तर-आधुनिकता :** गीताजंलि श्री के कथा-साहित्य में आधुनिकता, उत्तर-आधुनिकता का यथार्थ चित्रण हुआ है । 'माई', उपन्यास में सुनैना और सुबोध का पितृसत्ता व्यवस्था के कारण ड्योडी के अंदर ही अंदर शोषित हो रही अपनी माई को ड्योडी के बाहर लाना, परम्परागत परम्पराओं से लड़ना, सुनैना का विदेश जाना ; 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में हिन्दू श्रुति का विवाह मुसलमान हनीफ़ से ; 'तिरोहित' उपन्यास में चच्चो और ललना का समलैंगिक रिश्ता; 'प्राइवेट लाइफ', 'बेल-पत्र', आदि कहानियाँ आधुनिकता, उत्तर-आधुनिकता से प्रभावित हैं ।

(3) **स्त्री विमर्श** : गीताजंलि श्री ने स्त्री विमर्श को केंद्र में रख कर नारी जीवन के उन आंतरिक पहलुओं को बहुत ही सूक्ष्म दृष्टि से अपने काथा-साहित्य में उजागर किया है । 'माई' 'तिरोहित' जैसे उपन्यासों तथा नाम', 'लौटती आहट', 'अनुगूँज' आदि कहानियों में नारी के आंतरिक मन के छूपे हुए राग को लेखिका ने अपने लेखन के माध्यम से बाहर निकाला हैं ।

(4) **विविध पक्ष :** गीताजंलि श्री ने अपने कथा-साहित्य में विविध पक्षों - धार्मिक, राजनीति, सामाजिक, शैक्षिक पक्षों का वर्णन किया है । इन्होंने 'माई', 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यासों तथा 'आजकल' 'कसक', आदि कहानियों में धार्मिक, राजनीति, सामाजिक, शैक्षिक पक्षों का मार्मिक चित्रण किया है ।

(5) **प्रकृति वर्णन :** गीताजंलि श्री ने देश-विदेश की यात्राएँ की हैं । एक साहित्यकार होने के नाते जहाँ भी वे गईं, वहाँ की प्रकृति का मार्मिक वर्णन उन्होंने अपने कथा-साहित्य में किया है । साथ ही तेजी से प्रदूषित हो रहे पर्यावरण पर भी उन्होंने चिंता व्यक्त की है ।

(6) **मृत्यु बोध का भय :** गीताजंलि श्री के कथा-साहित्य में मृत्यु बोध का भय भी उजागर हुआ । 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास एवं 'तितलियाँ', 'बुलडोजर' आदि कहानियों में मृत्यु बोध के भय को चित्रित किया है ।

गीताजंलि श्री ने अपने उपन्यासों में समाज के आधुनिक जीवन के भिन्न - भिन्न आयामों के अंदर से कथ्य का चयन कर उन्हें बहुत ही प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया है । इनके उपन्यासों की कथा-वस्तु अलग-अलग होती है । इनकी भाषा-शैली भी नवीन तरीके की है । इन सब कारणों से गीताजंलि श्री का नाम हिंदी उपन्यास साहित्य में विशिष्ट है । गीताजंलि श्री की 'प्रतिनिधि कहानियाँ' की भूमिका में शशिभूषण द्विवेदी लिखते है कि - " 'माई', 'हमारा शहर उस बरस', 'तिरोहित', और 'खाली जगह' जैसे उपन्यास गीतांजलि श्री ही लिख सकती हैं । पारम्परिक ढाँचे में लिखने वाले लेखकों और पढ़ने वाले पाठकों को कई बार उनकी रचनाएँ अनबुझ लगने लगती हैं । दरसल, हिंदी लेखक और पाठक अब भी कला को दोयम दर्जे की चीज़ मानते हैं और साहित्य में लाओत्से

तुंग के शब्दों में कहूँ तो 'मूर्खता पूर्ण समाधान खोजना मनुष्य का शाश्वत उद्योग बन चुका है' ।"[15]

निष्कर्षत : लेखिका ने भाषा की सांकेतिकता के माध्यम से पाठक की समझ और चेतना को विकसित करने और उनके बीच खाली स्थान छोड़ने की नीति पाठक को निरंतर चैतन्य बनाये रखती है और लेखक, स्थितियों, पात्र, पाठक का बहु आयामी शिल्प सृजित करती है । इनके उपन्यासों के कथ्य को भी परम्परागत मानदंडों आधार पर जाँच परख नहीं सकते है और न ही किसी परंपरा में शामिल कियें जा सकते हैं । 'माई' और 'तिरोहित' नारीवाद की दृष्टि से उनका हिंदी उपन्यास साहित्य में अपना अलग महत्व है । इन्होंने इन दोनों उपन्यासों में स्त्री जीवन का सूक्ष्म दृष्टि से सृजन किया है । 'हमारा शहर उस बरस' में इन्होंने हिन्दू और मुसलमान दोनों के बीच साम्प्रदायिकता और आतंक की परिस्थितियों को नए शिल्प और संवेदना के साथ प्रस्तुत किया गया है । इसी तरह इनका चौथा उपन्यास 'खाली जगह' में इन्होनें अनाम शहर के अनाम विश्वविद्यालय के कैफे में बम विस्फोट के कारण कैफे में 'खाली जगह' में बचे तीन साल के लड़के के जीवन को लेकर लिखा गया उपन्यास है ।

अपनी कहानियों में लेखिका ने तेजी से बदलते हुए वक्त को बहुत बारीकी से प्रस्तुत किया है । गीतांजलि श्री ने अपनी कहानियों में स्त्री के अन्दर की फैंटेसी और उसके विचलन को सहजता और साहस के साथ बखूबी से प्रस्तुत किया है । कहानियों मे स्मृतियों का इस्तेमाल बेखौल किया गया है । उनकी कहानियों की भाषा, कथानक और उनके पात्रों के मनोजगत के साथ लिपटी एक खास किस्म की अल्हड़ता, दार्शनिकता और उसकी रवानगी है । फिर चाहे पति-पत्नी के बीच टूटन या मनमुटाव के बारे में हो या उम्र दराज़ लोगों में पनपते और विकसित होते मृत्यु से भय का चित्रण हो या फिर भरपूर जीवन जीने वाली एक औरत का तेरहवीं मंजिल से कूदकर आत्महत्या करने के पीछे का प्रश्न, उनकी कहानियाँ, पारम्परिक कहानियों से अलग दिखाई देती हैं । गीताजंलि श्री की कहानियों में केवल रची जाने वाली कथा-वस्तु नहीं है । इनकी कहानियाँ लेखक और पाठकों के बीच एक अद्भूत तारतम्य बनाती हैं । जीवन के पहलुओं को उजागर करती हैं । यह संवेदना उनकी कहानियों को पढ़ते हुए महसूस होती

है । इनका भाषा-शिल्प सभी तरह से समकालीन कहानिकारों से अलग है । इनकी लगभग हर कहानी अपनी टोन की है, विचलन इनकी कहानी में नहीं के बराबर है । यह बात अपने आप में बड़ी ही आश्चर्य जनक है कि अधिकतर बड़े से बड़े लेखक कई बार बाहरी दबावों और जरूरतों के चलते अपनी मूल टोन से विचलित हुए है । गीतांजलि श्री ने अपनी टोन को बरकरार रखा है ।

संदर्भ :

1. तिरोहित, गीतांजलि श्री, फ्लैप से ।

2. वही

3. प्रतिनिधि कहानियाँ, गीतांजलि श्री, पृ. 5

4. हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, अमरनाथ, पृ. 129

5. बीसवीं शताब्दी का हिंदी साहित्य, विजय मोहन सिंह, पृ. 150

6. वही, पृ. 150

7. प्रतिनिधि कहानियाँ, गीतांजलि श्री, पृ. 6

8. मार्च, माँ और सकुरा, गीतांजलि श्री, फैलेप से ।

9. हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, अमरनाथ, पृ. 163

10. प्रतिनिधि कहानियाँ, गीतांजलि श्री, पृ. 10

11. वही, पृ. 10

12. प्रतिनिधि कहानियाँ, गीतांजलि श्री, पृ. 60

13. अज्ञेय कहानी संचयन, (संपा.) गीतांजलि श्री, पृ. 10

14. प्रतिनिधि कहानियाँ, गीतांजलि श्री, पृ. 6

15. वही, पृ. 6

द्वितीय अध्याय

'हमारा शहर उस बरस' का कथ्य

(क) साम्प्रदायिकता :

भारत एक विशाल देश है । भारतीय समाज में एक नहीं बल्कि विभिन्न धर्मों के लोग एक साथ रहते हैं । भारतीय धर्मों में हिन्दू, सिख, जैन, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि हैं । यही कारण है कि भारतीय संविधान एवं विधि संहिता, विभिन्न सम्प्रदाय एवं धर्मों की संहिताओं से प्रभावित है । भारतीय समाज में दो प्रमुख सम्प्रदाय हैं - हिन्दू और मुसलमान ।

डॉ. अमरनाथ के शब्दों में - "साम्प्रदायिक आधार पर बँटे दो समुदायों के बीच झगड़ें और मारकाट को साम्प्रदायिकता कहते हैं ।"[1] "समूहों के हितों के बीच होने वाले टकराव का रूप जब विध्वसंक और दंगाई हो जाए तो तब वह साम्प्रदायिकता कहलाती है ।"[2]

साम्प्रदायिकता ने भारतीय सामाजिक जीवन में अविश्वास, द्वेष, प्रतिशोध, असहिष्णुता आदि की भावनाओं को बढ़ावा दिया है । इन्हीं कारणों से साम्प्रदायिकता ने एक नहीं बल्कि अनेक भयानक रूप धारण किये हैं, जिनका वर्णन हिंदी के अनेक संवेदनशील उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में बड़े ही विश्वसनीय ढंग से प्रस्तुत किया है । जिनमें प्रमुख हैं - शिवमूर्ति कृत 'त्रिशूल' (1993), भगवान सिंह कृत 'उन्माद' (1999), कमलेश्वर कृत 'कितने पाकिस्तान' (2000), गीतांजलि श्री कृत 'हमारा शहर उस बरस' (1998) आदि ।

गीतांजलि श्री ने आलोच्य उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में साम्प्रदायिकता के बौद्धिक विमर्श को केंद्र में रख कर लिखा है । यह एक ऐसा उपन्यास है, जो धार्मिक हिंसा और साम्प्रदायिकता की जड़ों को टटोलता है और साथ ही इंसानी जज्बातों और उनकी आस्थाओं को भी छूता हैं । विवेच्चय उपन्यास बाबरी मस्जिद विध्वंस से प्रभावित है । उपन्यास में किसी भी प्रकार के काल और स्थान को परिभाषित नहीं किया गया है । समीक्ष्य उपन्यास में

कई ऐसी घटनाओं का वर्णन किया गया है, जो अयोध्या की बाबरी मस्जिद विध्वंस घटना से प्रभावित है ।

लेखिका ने उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में साम्प्रदायिकता के दंगों और अशांत फैले हुए वातावरण का पूरी उद्धमता के साथ उल्लेख किया है । उपन्यास में एक शहर है, जहाँ एक मठ है एक विश्वविद्यालय है । ये दोनों ही संस्थाएँ समय-समय पर साम्प्रदायिक गतिविधियों को बढ़ावा देती हैं । इन दोनों संस्थाओं को बढ़ावा अख़बार देता है । अखबार साम्प्रदायिकता की हवा को ओर तेज करने में अहम् भूमिका निभाता है । अख़बार उन बातों को ज्यादा अहमियत देता है, जिससे उसका व्यापार बढ़े, लोग अखबार के प्रति ज्यादा से ज्यादा आकर्षित हो सकें । इसी कारण अख़बार का संपादक दिए गए भाषाणों, लेखों को तोड़ मरोड़ कर एक अलग ही अर्थ के साथ खबरों को पाठकों के सामने पेश करता है । लोगों को आपस में भड़काता है । जिसके कारण शहर में आतंक के वातावरण का सृजन होता है । सांप्रदायिक दंगों का भय उपन्यास में आरम्भ से लेकर अंत तक व्याप्त बना रहता है । लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास में सांप्रदायिक दंगों के भय को उपन्यास का मूल कथ्य बनाया है । प्रस्तुत उपन्यास के फ़्लैप पर दिए गए वाक्य समीचीन लगता है - "बात उस बरस की है जब हमारा शहर आए दिन सांप्रदायिक दंगों से ग्रस्त हो जाता था । आगजनी, मारकाट और तद्जनित दहशत रोजमर्रा का जीवन बनकर एक भयावह सहजता पाते जा रहे थे । कृत्रिम जीवन शैली का यों सहज होना शहरवासियों की मानसिकता व्यक्तित्व बल्कि पूरे वजूद पर चोट कर रहा था । बात दरअसल उस बरस भर की नहीं है उस बरस को हम आज में भी घसीट लाए हैं न ही बात सिर्फ हमारे शहर की । और शहरों जैसा ही है हमारा शहर ---सुलगता खदकता–स्त्रोत और प्रतिबिम्ब दोनों ही मौजूदा स्थिति का । ...अभी भी जो समझ रहें हैं की दंगें उधर हैं - दूर, उस पार उन लोगों में ---पाते हैं की 'उधर' 'इधर' बढ़ आया है वे लोग 'हम' लोग भी हैं, ... दंगे जहाँ हो रहें हैं, वहाँ खून बह रहा है । ... अपनी ही खाल के नीचें छिड़े दंगे से दरपेश होने की कोशिश है इस गाथा का मूल ।"[3]

इसमें कोई शक नहीं की हमारा शहर उस बरस नहीं था बल्कि कई वर्षों पूर्व 'उस' से लेकर 'आज' तक सैदव विद्यमान है । शहर पुल, नाले, गली,

दिवार, के इस पार और उस पर है जैसा की लेखिका ने उपन्यास में लिखा है "हमारा शहर देश की दंगों - राशि का स्रोत और प्रतिबिम्ब दोनों बना हुआ है । देवी मठ यहीं है और उसकी शाखाएँ दूसरे शहरों में फूटती जा रही हैं । यहाँ घूम लो तो मान लो भारत - भ्रमण हो गया ।"[4]

वर्तमान समय की यह सबसे बड़ी विड़म्बना है कि जो लोग विवेकवान और बुद्धिजीवी हैं । उन्होंने भी अन्याय के खिलाफ आवाज उठानी बंद कर दी है तो फिर उन लोगों से संघर्ष की उम्मींद कैसे कर सकते हैं ? जिनके पास उचित और अनुचित के बीच अंतर करने की बुद्धि ही न हो । गीतांजलि श्री ने अपने उपन्यास में भी कुछ ऐसे ही पात्रों का चित्रण किया है । जिनके पास विवेक तो होता है लेकिन या तो वो चुपी साधे हुए हैं या फिर अपना स्वार्थ साधने के लिए कोई कुचक्र रचते हैं । लेखिका इस उपन्यास में ऐसे छद्म व्यक्तियों के चेहरे को बेनकाब करती हैं । प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका 'मैं' कथा वाचक के रूप में शहर की हर घटनाओं का विवरण देती हैं । लेखिका उपन्यास के आरम्भ से लेकर अंत तक हर जगह उपस्थित है । उपन्यास के शुरुआत में ही इस बात का अहसास पाठकों को होने लगता है कि जरुर कुछ ऐसा घट चुका है जिससे आने वाला वक्त बुरी तरह उससे प्रभावित होने वाला है - "घबराकर जिस शहर में निकल गए थे । वे तीन की अपराध और अपराधी, घायल और मुर्दे, सबको निकाल लाएँगे । साफ-साफ देख लेंगे और जैसा साफ़ देख लेंगे वैसा ही साफ़ दिखा देंगे । शरद, श्रुति और हनीफ़, जिन्होंने ठान लिया था की लिखेंगे । इस वक्त चुप नहीं रहा जा सकता । सब कुछ खोलकर रख देना है, वह हवा नहीं, बवंडर है; जो हमें कहीं उखाड़ न दे ।" [5]

हनीफ़, शरद और श्रुति उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं । तीनों मित्र हैं । साथ ही अपनी सामाजिक जिम्मेदारी के प्रति सचेत हैं । तीनों शहर के अंदर होने वाले साम्प्रदायिक तनाव के प्रति चिंतित भी हैं । जिस समय शहर में दंगे, फसाद, मारकाट, होती है । उस समय दूसरे विवेकवान, बुद्धिजीवी अपने घरों में दुबके रहना पसंद करते हैं । वहीं हनीफ़ ,शरद और श्रुति तीनों दंगों से प्रभावित इलाकों का दौरा करने जाते हैं । साम्प्रदायिक दंगों से सम्बन्धित रिपोर्ट को

अखबार में प्रकाशित करवाते हैं । जिसका नुकसान भी इन्हें सहन करना पड़ता है । सारा शहर मानों उनका दुश्मन बन जाता है ।

बढ़ते हुए साम्प्रदायिक तनाव के कारण शहर में अफवाहों की भी अहम् भूमिका होती है । एक ऐसी ही अफवाह उस बरस शहर में फ़ैल गई । पीलिया नामक बीमारी का संक्रमण रोग पानी से फ़ैल गया है । इसका दोष हर कोई एक-दूसरे पर लगातें हैं । मुसलमान हिन्दुओं पर और हिन्दू मुसलमानों पर । वास्तव में सांप्रदायिक तनाव के क्षणों में किसी पर विश्वास करना आसान नहीं होता । सामान्य हालत पर विश्वास किया जा सकता है, पर असामान्य हालत पर संदेह, भय की स्थिति ही उभरती है - "उस बरस एक बार सडकों पर ऐसी ही नदियाँ बहने लगी थीं, पर वह बारिश का नहीं था, टंकियों का पानी था, जो मुहल्लों के मुहल्लों ने जहर के डर से खोलकर बहा दिया था ।"[6] उस बरस सडकों पर उन्माद की नदियाँ बहाने लगी थीं ।

शहर दो हिस्से में बँट गया था, पुल के इस पार और उस पार । लोग पुल के इस पार वाले इलाके को हिंदुस्तान और उस पार वाले इलाके को पाकिस्तान कहने लगे थे । दोनों ही हिस्से में कभी इस पार तो कभी उस पार दंगे, हत्याएँ, लूटपाट, बलात्कार, लाशों के ढेर लग जाते थे । शहर के हालातों पर काबू पाने के लिए एक बार नहीं बल्कि अनेक बार कर्फ्यू लगाया जाता है - "कहीं दूर, पुल के उस पार शहर में कुछ घट गया । एक संप्रदाय के चार युवकों ने दूसरे संप्रदाय के इक्के चालक को जबरन नीचे खींचकर उसकी आँखें फोड़ दी, भीड़ जमा हुई तो पुलिस को आँसू गैस छोडनी पड़ी, कुल मिलाकर दो मरे, छः घायल अब स्थिति पूरी तरह से नियंत्रण में हैं, एहतियातन कर्फ्यू लगा दिया गया है ।"[7]

शहर में संदेह और डर हमेशा लोगों के मन में बना रहता है - "दूर धमाके की आवाज हुई 'पटाखा' हो सकता है ।"[8] वह आवाज पटाखें की नहीं बल्कि बम-विस्फ़ोट की होती है । विस्फ़ोट के कारण कई घरों की छत जल जाती है । दिवारों का मलबा हर जगह बिखरा हुआ है । घरों के बिजली वाले पंखें दंगाइयों ने चुरा लिए हैं । शहर की स्थिति सामान्य नहीं है । राह चलते हुए मुसाफिरों को भी कुछ उग्र तत्व अपना शिकार बना लेते हैं । कसूरवार है या नहीं कोई

मायने नहीं । उस बरस व्यक्ति, व्यक्ति न बन कर प्रतीक बन गये थे । ये इस धर्म का वह उस धर्म का । ये हमारे धर्म का नहीं है इसे मारो, पिटो । "उस तरफ भीड़ ने ट्रक रोककर उसके ट्रक ड्राइवर को मार दिया ।"[9] इस प्रकार की घटनाएँ उस बरस अख़बारों के पन्नों में आम खबर बन जाती है ।

सांप्रदायिक तनाव के माहौल में लोग अपने आप को असुरक्षित महसूस करते हैं । कई लोग तो, अपनी सुरक्षा के लिए खुद ही बम जैसे खतरनाक वस्तु बनाने लगते हैं - "गली में लोग शरद को दिखा रहे है, हमें अमीर देशों की मद्द नहीं मिल रही तो हाथ बाँध के तो नहीं बैठ जाना ? हम अपनी मद्द खुद करेंगे । पान-जर्दा के टिनों में सल्फ़र और पोटेशियम नाइट्रेट ठूँसकर भरा है यह बम है । यह भी, जलते-जलते बदन पर चिपक जाता है ।"[10]

पुल के इस पार और उस पार, हिन्दू हो या मुस्लिम आम जनता कहीं पर भी महफूज नहीं है । न घरों में और न ही सड़कों पर । साम्प्रदायिक दंगाई मौका मिलते ही अपना शिकार उन लोगों को बनाते हैं, जिनका इन दंगों से कोई लेना देना भी नहीं होता । शहर में आतंक का माहौल हर जगह छाया हुआ है । अखबार में खबर और तस्वीर छपी है कि - "स्वरूपनगर की बड़ी कोठियों को जलाने की कोशिश हुई है ।"[11] शहर का तनाव स्थानीय पुलिस द्वारा नियंत्रित न होने के कारण सी.आर.पी.एफ. को हटा कर वहाँ बी.एस.एफ. को बुलाया जाता है ।

उग्र साम्प्रदयिकों ने शहर का वातावरण असहनीय बना रखा है । बार-बार कर्फ्यू लगने और स्थिति सामान्य होने के बाद । फिर थोड़ी ढील होने पर या किसी प्रकार का विवादी भाषण या कोई लेख अखबार में छपने पर वैसा ही माहौल वापिस आ जाता है । शहर में तनाव और बढ़ जाता है । सांप्रदायिक दंगों से तंग आकर गई लोग अपने-अपने घरों को छोड़ कर भागने लगे हैं । जिनके पास जाने के ठिकाने हैं वो वहाँ जा रहे हैं । बहुत से ऐसे भी लोग हैं जो शहर को छोड़कर जाना चाहते हैं । पर जा नहीं सकतें, उन के पास जाने के ठिकाने नहीं हैं । वे मजबूर हो कर वहीं रुके हुए उसी शहर में । शहर में बहुत से लोग अपनी जान बचने के लिय इधर-उधर भाग रहे हैं - "सुना है कि स्टेशन पर ऐसी भीड़ है कि तिल रखने की जगह नहीं और टिकटों की कमी के कारण यात्रियों के

हाथ पर ही टिकट का ठप्पा लगा रहें ।"[12] शहर में तनाव को कम करने के लिए बी.एस.एफ. को हटा कर गोरखा रेजीमेंट बुलायी जाती है ।

पहले खबर आती थी, उस पार किसी को जला दिया, किसी को चोट लग गई, किसी को मार दिया गया, सामूहिक बलात्कार हुए, किसी का घर लूट लिया जैसी खबर पहले दूसरे स्थान के लिए, दूसरे वक्त में होती थी । अब ये ख़बरें, उसी शहर के, उसी समय में, रोज़ के अख़बारों में, उन्हीं की जगहों के बारे में होती हैं । आए दिन ऐसी ही घटनाएँ घटित होती हैं, धीरे-धीरे यें घटनाएँ आम हो जाती हैं ।

नेताओं के साथ भारी-भीड़, मस्जिद में नमाज़ अदा करने के लिए चल देती है । पुलिस भीड़ को रास्ते में ही रोक देती है । हवा में चार गोलियाँ चलाई जाती हैं । गोलियों की आवाज से भीड़ बेकाबू हो कर इधर-उधर भागने लगती है । कुछ लोग जमींन पर गिर जाते हैं । लोग उन्हीं पर चढ़ कर भागने लगते हैं । जो गिर जाते हैं वे उठ नहीं पातें । भीड़ उन्हें अपने पैरों के नीचे कुचल देती है । भीड़ घबरा जाती है । अखबार में खबर छपती है - "सब बुरी तरह से घबरा गए हैं पचास से ज्यादा लोग तीसेक मिनट के अंदर ही अंदर मर गए हैं और उनमें बच्चे भी थे । अधिकांश पैरों तले रौंद दिए गए, बाकी, अख़बारों का कहना है - मैडिकल ओपिनियन है कि डिस्फ़िक्सिएशन से जाते रहें ।"[13]

शहर में आतंक का साया छा जाता है । पुल के 'उस' पार के लोग, 'इस' पार नहीं आना चाहते और न ही 'इस' पार के लोग 'उस' पार जाना चाहते हैं । एक ही शहर सांप्रदायिक दंगों के कारण दो अलग - अलग शहरों में विभाजित हो जाता है । न तो 'उस' पार के हिन्दू सुरक्षित, न ही 'इस' पार के मुसलमान । शरद, हनीफ़ और श्रुति के साथ कुछ विद्यार्थी इन दंगों के बारे में आपस में वाद-विवाद करते हैं । एक विद्यार्थी अपने प्राध्यापक से कहता है - "मैं आप लोगों की बात नहीं कर रहा, उन लोगों की कर रहा हूँ, उस पार रहने वाले | उधर सर, मुसलमानों के मोहल्ले में जाने से डर लगता है ।"[14] इन सब बातों को सुन कर, हनीफ़ को थोड़ा दुःख होता है । उस समय आम धारणा बन गई कि - "मुसलमानों में साम्प्रदायिकता भरी हैं ।"[15] हनीफ़ एक मुसलमान है । परन्तु वह अपने आप को हिन्दू भी मानता है - "मैं हूँ, मगर वैसा नहीं । कैसा नहीं ?

उनके जैसा । जो उधर रहते हैं । दंगे करवाते हैं । खून बहाते हैं । दंगे का मतलब जानते हो ? श्रुति उठ गई । असल दंगे वहाँ है जहाँ खून बह रहा है ।"[16] श्रुति का कथन बिल्कुल सही है । वास्तव में दंगे तो वहाँ है जहाँ निर्दोष लोगों का खून बह रहा है, दंगे करने वाले इंसानों का कोई महजब नहीं होता, न ही कोई इमान होता है । वे तो केवल सांप्रदायिक मानसिक बीमारी से ग्रस्त होते हैं ।

मठ का जुलूस शहर के बाज़ार में, चीखती हुई, लाउडस्पीकर की आवाज के साथ गुजरता है । आकाश में पीला, बैंगनी, लाल, रंग उड़तें हैं । अचानक एक लड़का दौड़ कर आता है और जोर से चीखता है - "हाय-हाय मार डाला मुसल्लों ने मारा ।"[17] उस बरस शहर में, सही जानकारी लिए बिना ही चक्कू-छुरियाँ हवा में लहराने लगते हैं । परिणाम स्वरुप तीन लोगों के शव गली में मिलते हैं । एक शव तो उस बेकसूर भिखारी फ़कीर का है । न जाने क्यों उन साम्प्रदायिक उग्र लोगों को उस बेचारे भिखरी से किस प्रकार का डर था की उसे मार दिया, उस पर अपनी विजय हासिल कर ली । साम्प्रदायिकता की आग में बेकसूर लोग जलते हैं । तमाशबीन लोग तमाशा देख कर अपने-अपने घर चले जाते है । ऐसा ही हो रहा था उस शहर में उस बरस ।

उपद्रवी संप्रदायी तत्व दंगों का कोई भी मौका हाथ से नहीं जाने देते । मौका मिलते ही दंगों को छेड़ देते हैं । लोगों को समझने, संभलने का मौका भी नहीं मिलता और घटना घटित हो जाती है । सामन्य स्थिति, असामान्य स्थिति में बदल जाती है । कोई भी सुरक्षित नहीं है, न बूढ़ा, न जवान, न बच्चा और न ही औरतें । छोटे जोश विभाग के अपने साथियों को बताता है कि - "हमारे शहर से जरा बाहर, आबादी से दूर होते हुए ही, रेलगाड़ी की जंजीर खींचकर रोका और बहुत आदमियों को मारा, बहुत औरतों को ज़लील किया .... रेप किया । फिर लोहे की छड़ें अन्दर डालकर घाव किये ।"[18] "दो तीन बम फट गए, दो-तीन जगह पर गए ।.....एक औरत पागल हो गई है उसका एक महीने का बच्चा मर गया ।"[19]

कपाड़िया, शरद, ददद्दू, हनीफ़ और श्रुति को शहर के दंगों के बारे में बताता है कि दंगों में बेकसूर लोगों को, जो अपने आप को मुसलमान भी नहीं मानते दंगाइयों ने उन्हें भी अपना शिकार बनाया है । वे लोग अपनी सफाई भी देते हैं

कि हम मुसलमान नहीं हैं हम तो मैमन हैं । "लोग तंग आ चुके हैं । दोनों तरफ के गुंडों के खुलकर नाम बता रहें है । .....जो खुद को पूरी तरह मुसलमान मानते नहीं, वे भी पार लग गए । क्रूर से क्रूर आदमी भी रो पड़ेगा । निहत्थे लोगों को मारा है और वे कह रहे हैं कि हमें क्यों मार रहे हो, हम तो मैमन हैं...।"[20]

अखबार में एक ओर हिन्दू और मुसलमानों को आपस में भड़काने वाली खबर आती है कि - "मस्जिद में जो बम फूटा है, उसके बारे में यह माना जा रहा है कि इसमें हिन्दुओं का हाथ है ही नहीं कि मुसलमानों ने जो बम हथियार छिपा रखे थे, उन्हीं में गलती से एक फट गया ।"[21] खबर का मकसद लोगों को बताना है कि मुसलमान अपने ही पवित्र स्थानों पर गोलियाँ और बारूद छिपाये रखते हैं और मुसलमानों का आक्रामक चेहरा दिखाना । चाहे हकीकत कुछ और ही क्यों न हो ?

शहर में जहाँ दोनों सम्प्रदायों के बीच शांति है । वहाँ भी गैर और बेगैर सांप्रदायिक उग्र तत्त्व शांत माहौल को तोड़ने की कोशिश करते हैं । उन्हें कोई मतलब नहीं हैं । उनकी गतिविधियों द्वारा, किसी को, कितना भी नुकसान क्यों न हो ? सुख, चैन को खत्म कर के, उन्हें तो सिर्फ आतंक ही फैलाना है - "एक मुसलमान की फैक्टरी में आग लगाई गई । आग फैलकर बगल की पोलिथीन फैक्टरी को भी भस्म कर गई, जो हिन्दू की है । दोनों पड़ोसी और उनके पीछे ढेर सारे हिन्दू और मुसलमान गमगीन खड़े हैं । हमारे यहाँ कोई दुश्मनी नहीं है ... बाहर वालों की कारस्तानी है ।"[22]

हनीफ़, श्रुति और शरद तीनों दंगों के खिलाफ अपना लेख अख़बार में छपवाते हैं । अख़बार का संपादक बड़ी ही चालाकी से तीनों के नाम में से केवल हनीफ़ का नाम अख़बार में छापता है । शहर के उग्र साम्प्रदायिक तत्त्वों का सारा गुस्सा हनीफ़ की ओर मुड़ जाता है । हनीफ़ को हर तरह से मानसिक पीड़ा देने लगते हैं । आए दिन अख़बार में खबरें छपती रहती हैं । खबरों में हनीफ़ से माफ़ी माँगने और धमकी देनी की खबरें आती रहती हैं ।

वहीं दूसरी तरफ मुसलमान भी अपने अख़बार, पर्चों के द्वारा शांति की आड़ में साम्प्रदायिकता की भावनाओं को बढ़ावा देते हैं - "मकबूल हक़ अपने अखबार

में ... मुसलमानों की अलग अदालतें हों, क्योंकि सरकारी अदालतों ने उनकी रक्षा नहीं की है ।" [23] जैसी खबरें छापता है । साथ ही अलग-अलग तरह के पर्चे छपवाकर उन्हें लोगों तक पहुँचवाता है । एक तरफ वह मुसलमानों को पकड़ता है और दूसरी तरफ शांति बनाए रखने के लिए पर्चे छपवाता है - "आदाब अर्ज । सबसे खतरनाक है । मुरिश्क यानि नास्तिक और मुनाफ़िक यानी पाखण्डी । ये लोग मुसलमान के पास भी आते हैं, काफ़िरों के पास भी जाते हैं और ऐसी बातें करते हैं कि दंगा-फसाद हो । ... वे शैतान की औलाद हैं । ... उन्हें जहाँ पाओ, कत्ल कर दो ।"[24]

शहर के लोगों में एक-दूसरे के प्रति संदेह, भय, गलतफहमियों को दूर करने और आपसी समीपता के लिए एक सभा आयोजित की जाती है । इस सभा में शरद और हनीफ़, हिन्दू और मुसलमान के संबंधों पर अपने विचार को प्रस्तुत करने जाते हैं । सभा में शरद को सभी ध्यान से सुनते हैं क्योंकि वह हिन्दू है, शरद के अनुसार - "मैं सुधार की माँग कर रहा हूँ, मुसलमानों में भी, औरों में भी । सारे धर्मों के कट्टर तत्वों को बढ़ने देने के खिलाफ़ बोल रहा हूँ । जिन हिन्दुओं ने और जिन मुसलमानों ने मज़हब को इतना घिनौना बना दिया है । उन दोनों के ख़िलाफ़ बोल रहा हूँ ।"[25] परन्तु जैसे ही हनीफ़ बोलने वाला होता है । सभा में 'मुसलमान है ... हनीफ़ ... सभा में खुसर-फुसर होने लगती है । हनीफ़ अपना भाषण नहीं दे पाता ।

साम्प्रदायिक मानसिकता से ग्रसित लोग हनीफ़ के बोल को समझने की बजाय - "चुप बे गैर हिन्दू"[26] तेज़ आवाज कर के, तीसरा पत्थर मारता है जो शरद के कपाल पर लगता है । शरद घायल हो जाता है । जो उग्र तत्त्व पत्थर मार रहे हैं वे जै-जगदम्बे का नारा भी लगाते हैं । दूसरे दिन अख़बार में घायल हुए शरद को हीरो बना दिया जाता है ।

कुछ साम्प्रदायिक युवक, हनीफ़ को मारने के लिए उसके घर पर हमला करते हैं । उसे गाली देते हैं । जिसे सुनकर दद्दू गुस्सा होते हैं । वे भी उन युवकों को गालियाँ देते हैं । घर से चले जाने के लिए कहते हैं । दंगाई युवक और अधिक गुस्से में आकर दद्दू को ऊपर उछाल कर दूर फेंक देते है - "दद्दू

मुँह के बल गिर पड़े थे । उनकी धोती जांघों के ऊपर तक उलट गई थी । और उनकी पतली नंगी टाँगे बेइज्जत होकर धूल में पड़ी थीं ।"[27]

मानवता का पतन सरेआम होता है । यह घटना इस और इशारा करती है । भारत में न तो जनतंत्र है न ही मानवीय मूल्य, सारा वातावरण दम घोंटू बनने की राह पर है । इसे बचाया जा सकता है - "यदि हम, हिन्दू और मुसलमान दोनों ईमानदारी के साथ पारस्परिक सम्मान और स्नेह का वातावरण पैदा करने का सक्रिय प्रयत्न करें, तो कोई कारण नहीं की इस समस्या का समाधान न हो सके ।"[28]

लेखिका के साम्प्रदायिकता संबंधी विचारों को कमजोर मानते हुए आलोच्य उपन्यास पर अपने विचार रखते हुए डॉ. गोपाल राय का मत है - "उपन्यास का 'मठ' हिन्दू साम्प्रदायिकता का प्रतीक है । यह साम्प्रदायिकता, रहस्यपूर्ण और आंतक से भरी दुनिया का सृजन करती है । उपन्यास का नाभि केंद्र साम्प्रदायिकता तनाव की असामान्य स्थिति में एक मुस्लिम पात्र के अकेला होने और अलग-थलग पड़ने की मानसिकता से निहित है । इस तनाव की आड़ में विश्वविद्यालय की राजनीति भी सक्रिय है, साम्प्रदायिकता के शिकार एक उदार बुधिजीवी का चित्रण बहुत प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया गया है । पर गीतांजलि श्री का साम्प्रदायिकता संबंधी विजन बहुत धुँधला और एकांगी है । इसी कारण वे उपन्यास में किसी जीवन्त कथा संसार की रचना नहीं कर पायी हैं । अपनी इस असमर्थता को छिपाने के लिए उन्होंने उत्तर-आधुनिकता की शरण ली है और स्थितियों या प्रसंगों को टपके हुए असंबद्ध लघु कथनों के रूप में प्रस्तुत किया है ।"[29]

डॉ. गोपाल राय ने लेखिका का साम्प्रदायिकता संबंधी विजन धुंधला और एकांगी क्यों है ? इस पर उन्होंने कुछ नहीं कहा । जबकि लेखिका ने साम्प्रदायिकता संदर्भित कई अनछुए पहलुओं को उठाया है । आलोच्य उपन्यास पर अपने विचार रखते हुए डॉ. रामचन्द्र तिवारी का विचार है - "पूरा उपन्यास इस दिशा में संकेत करता हुआ प्रतीत होता है कि आज साम्प्रदायिकता उन्माद के सामने मनुष्यता की आवाज एक चीख बन गई है । मनुष्यता पर बार-बार हमले हो रहे हैं । सारा आकाश दम घोंटू हो जाता है । न कहीं जनतन्त्र है, न

मानवीय मूल्य । अनुगूँजों, सूचनाओं, एलानों, बहसों, संवादों, नारों और प्रतीकों के सम्मिलित उपयोग से कथा सूत्रों की सघन संरचना करता हुआ यह उपन्यास नैरेशन की सामान्य धारणा से अपने को अलग करता है ।"[30]

आलोचक शशिकला राय अपने विचार प्रकट करते हुए करते हुए कहती हैं - "जब धीरे-धीरे आजादी ...स्वर्ण जयंती की और सरक रही थी ...तब भारत भर में नर-पिशाचों का घोर धर्म विध्वंसी तांडव हो रहा था । मस्जिद गिरिजाघर के साथ-साथ मंदिरों की भी नींव हिली । लेखिका की वेदना है कि चाहे कुछ भी कह लें हम, नींव तो राष्ट्र की ही हिली । जिस तरह मुल्क में ईटें टूटीं, उसमें सच तो यह है कि नींव तो मुल्क की हिली । एक बार जो नींव हिल गई तो उसी मजबूती को लेकर न तो हम नि:शंक रह सकते हैं न ही आश्वस्त । सदा दहशत का साया हमारे ऊपर मंडराता है । हमारे मुल्क में धर्म लाउस्पीकरों में बँटता है अब । शरद, हनीफ़ भी नाम होकर मुहीम बन गए । वे, जो धर्म के पाखंडों का विद्रोह करते थे । वे, एक-दूसरे के साथ सहज नहीं रह पाते । साम्प्रदायिकता का तूफान गुजर चुका है । तूफान का खौफ बाकी है उस साल की बदहवास सरगोशियों बीत रहे सालों के साथ लिपटी हैं ।"[31]

(ख) शैक्षिक राजनीति :

'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में मौजूदा विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग की चर्चा विदेशों तक है और इसे इस प्रसिद्धि तक पहुँचाने का श्रेय विभागाध्यक्ष साहब प्रोफ़ेसर नंदन को जाता है । समाजशास्त्र विभाग की सामाजिक प्रतिबद्धता से सभी अवगत हैं । विभागाध्यक्ष साहब नंदन शहर में लगातार हो रही साम्प्रदायिकता को लेकर चिंतित हैं । विभागाध्यक्ष साहब नंदन का विश्वास है कि ऐसी विकट परिस्थितियों में बुद्धिजीवी ही हैं, जो इस समस्या से लड़ सकते हैं । इसका समाधान कर सकते हैं । शहर के साम्प्रदायिक माहौल को देख कर उनको गुस्सा भी आता है और दु:ख भी होता है - "लानत है, बच्चे पहले छुपम-छुपाई 'कट', आइस-पाइस खेलते थे, अब हिन्दू, 'कट' मुसलमान, खेलते हैं । वी इंटलेक्चुअल, हैव टू डू समथिंग । कल, मेरी पोती' कट कट', कह रही थी "हम जानते हैं आप क्यों चुप हो गए, आप, 'कट' मुसलमान की बात कर रहें हैं ।" ... वी इंटलेक्चु अल फ़ील वैरी परेशान ।

लिखना चाहिए, बोलना चाहिए । आज अख़बार देखा ? ... वहाँ पहले मंदिर था । वह ! 'कट '। सो व्हाट ? उसके पहले बौद्ध विहार था ... वी इंटलेक्चुअल आर गिल्टी फॉर रिमेंनिंग कवायत ... ।"[32] विभागाध्यक्ष साहब की बातें सुनकर यह लगता है कि वे अपनी सामाजिक जिम्मेदारियों के लिए वे कितने सजग हैं । बुद्धिजीवी होने के नाते वे कुछ करने की चाहत रखते हैं । लेकिन जैसे ही विभाग में 'रोटेशन' की प्रक्रिया शुरू होती है उनको अपने हाथों से अध्यक्ष का पद जाते हुए दिखाई देता है, वैसे ही उनका असली चेहरा भी सामने आने लगता है । वास्तव में विभागाध्यक्ष साहब नंदन जैसे छद्म बुद्धिजीवी ही हर समस्या के विकराल करने के लिए कसूरवार है ।

वास्तव में, आज कुछ बुद्धिजीवियों ने छद्म व्यक्तित्व का चोला पहन रखा है । समाज की समस्याओं से उनका कोई मतलब नहीं है, जब कभी उनको मौका मिलता है, इन सब के खिलाफ भाषण देने का तो उनके लिए बायें हाथ का खेल है, परन्तु जब उनके कर्तव्य की बारी आती है, तो सबसे पहले वे अपने हाथ पीछे खिंच लेते हैं । जितना ये अपने अधिकारों के प्रति सजग हैं, उतना ही वे अपने कर्त्तव्य के प्रति उदासीन हैं । पहले विभागाध्यक्ष साहब नंदन बुद्धिजीवियों की अकर्मण्यता को लेकर इतने परेशान थे, परन्तु बाद में जब उनकी विभागाध्यक्ष की कुर्सी को बचने के लिए, हनीफ़ के खिलाफ विभाग में अपने साथियों (डॉ. छोटे जोश, उर्मिला) के साथ मिलकर कुचक्र रचते हुए दिखाई देते हैं ।

शहर में साम्प्रदायिक तनाव का माहौल है । इसका प्रभाव धीरे-धीरे विभाग में भी पड़ने लगता है । विभागाध्यक्ष साहब नंदन इस अवसर का लाभ उठाना चाहते हैं । हनीफ़ एक मुसलमान है । वह आसानी से बाकि के प्राध्यापकों को भी हनीफ़ के खिलाफ करने का प्रयास करता है । वह नहीं चाहता हनीफ़, विभागाध्यक्ष का पद संभाले ।

प्रोफ़ेसर हनीफ़ एक प्रसिद्ध बुद्धिजीवी है । वे अपने लेखन और किताबों से देश-विदेश में ख्यातिलब्ध हैं । उन्हें देश में दूर-दूर से संगोष्ठी के लिए बुलाया जाता है । हनीफ़ एक नेक और धर्म-निरपेक्ष पसंद व्यक्ति हैं । यही कारण है कि उनकी विभाग में अपनी एक विशेष पहचान है । हनीफ़ की एक विशेषता है

कि वे किसी भी प्रकार के व्यंग्य को किस्से के रूप में प्रस्तुत कर देते है । जब विभागाध्यक्ष साहब नंदन नई काली पैंट और पीली टी-शर्ट पहन कर विभाग में आते हैं, तो उन्हें देख कर हनीफ़ एक किस्सा सुनाता है - "एक हमारे जानने वाले ने भी ऐसी ही पीली टी-शर्ट और काली पैंट चढ़ाई और गुसलखाने में की बस ज़ोर की आवाज हुई ... भड़ाम ... क्या हुआ बेगम ने पुकारा ? टी-शर्ट गिर गई ; हमारे दोस्त ने वापस हाँक दी । ऐसे ज़ोर के भड़ाम से ? बेगम हैरान हुई । मैं उसमें था, दोस्त ने सफाई दी ।"[33] विभागाध्यक्ष साहब नंदन, हनीफ़ को इन्हीं कारणों से पसंद नहीं करते थे ।

अंग्रेजों के आने से पूर्व भारत में हिन्दू और मुसलमान धर्मों के लोगों के बीच बैर-भाव दिखाई नहीं देता था । यद्पी दोनों ही धर्मों में बहुत सी ऐसी प्रवृत्तियाँ थीं, जो एक-दूसरे के लिए खलने वाली थीं । जब गुलाम भारत में आजादी के लिए राष्ट्रीय आन्दोलन होने शुरू हुए । उन्हें देख कर अंग्रेज सरकार के दृष्टिकोण में परिवर्तन आया । उसका मुख्य कारण राष्ट्रीय आन्दोलन में हिन्दू और मुसलमान दोनों ही समुदायों ने मिलकर आन्दोलन आरम्भ किया था । ब्रिटिश सरकार ने दोनों समुदायों की एकता को तोड़ने के लिए 'फूट डालो और शासन् करो' की नीति अपनाई । साथ ही भारतीय इतिहास को तोड़-मरोड़ कर जनता के सामने प्रस्तुत किया । हनीफ़ इन्हीं बातों की ओर संकेत करते हुए विद्यार्थियों को पूर्वाग्रह के विचारों को स्पष्ट करने का प्रयास करता है, ताकि वे सही मायनों में दोनों धर्म के बीच नफ़रत न देखें - "हम अपने देश का इतिहास क्यों नहीं जानते ? तभी तो हैवानी आत्माएँ इतिहास के पन्नों से कुछ-का-कुछ उठाकर उसका मलीदा बनाकर ज़हर-बुझे तीरों पर लगाकर तान देती हैं और हम अपनी जाहिली में उन पर यकीन कर लेते हैं ।"[34]

हनीफ़ विद्यार्थियों में हिन्दू और मुस्लिम धर्म के प्रति साफ-सुथरी धारणा का बीजावपन करना चाहता है । वे विद्यार्थियों को समझाते हुए कहते हैं - "जब कहते है कि वैदिक संस्कृति थी और उससे पहले मोहनजोदड़ो था । उसमें भी तरह-तरह के टुकड़े थे, जो बनते-बदलते रहे हैं ।"[35] आगे हनीफ़ विद्यार्थियों को दोनों धर्म के आपसी प्रेम और सद्भावना के विषय में समझाते हुए कहते हैं - "मुगलों के रिकॉर्ड मत देखो, अकबर जैसों को दरकिनार करो, छोटे-छोटे शहरों

के लोकल रिकार्ड देखो । वहाँ भी यही सारी मिसालें मिलेंगी, जो साथ और सद्भावना बतलाती है ।"[36] साथ ही हनीफ़ बेईमान राजनीतिज्ञ की ओर इशारा करते हुए कहते हैं - "वहाँ सिर्फ जुल्म और सिर्फ मुसलमानों का ही, क्यों हमारे कानों में डाला जा रहा है ? सत्ता की होड़ में राजनीतिज्ञ बेईमानी करते हैं, करेंगे ही, मगर क्यों हम-तुम उनके झाँसे में आ रहें हैं ।"[37]

हनीफ़ की इन बातों से स्वत: स्पष्ट है कि वह चाहता है कि छात्राओं को इतिहास की सही तस्वीर दिखायें, शांति और अमन का सन्देश फैलायें तथा राजनीतिज्ञों की कुटिल नीतियों के झाँसे में न आयें ।

शहर का 'मठ' कहने को तो एक ऐसा धार्मिक स्थल है जहाँ शांति का निवास होता है । उस बरस 'मठ' शांति नहीं बल्कि साम्प्रदायिकता की आग को सुलगाने का काम करता है । मठ शहर में ही नहीं बल्कि शिक्षण जैसी पवित्र जगहों पर भी सेंध मारता हुआ दिखाई देता है । मठ के पास ही विश्वविद्यालय है । विश्वविद्यालय में हलचल मचाने के लिए, मठ दिन-रात लाउडस्पीकरों के द्वारा भड़काऊ प्रवचन को, आग के गोलों की तरह चिखतें हुई आवाजों में गोले की तरह दागता हैं ।

विश्वविद्यालय में मठ की आवाज गूँजती है । प्राध्यापक और विद्यार्थी दोनों ही सुन रहें है - "देवी के चरणों में, कलम करके तुम्हारे शीश डाल देंगे ... हमारी जाति नीच व अनुदान नहीं है । यह गौरवमय है ... धर्म भ्रष्टता दूत हमारी शिक्षा प्रणाली को दूषित कर रहें हैं ।"[38] "आँखें खोलों, देखो, यह सही नहीं....राजस्थान की बंजारा जा तियों को ही लो... कि हिन्दुओं की आबादी घटती जा रही है मुसला.....लड़ाई, लूटमार, ध्वंस इतिहास के दौर होते है किसी एक जाति ...मानो की बढ़ती जा रही है ... ।"[39] मठ से आने वाली आवाज, छात्राओं को भटका रही हैं कि यह जाति प्रदूषित है । मठ अप्रत्यक्ष रूप से मुसलमानों को निशाना बना रहा है । 'तुम्हारे' शब्द से अभिप्राय मुसलमानों से ही हैं ।

मठ प्रवचनों के द्वारा शिक्षा-प्रणाली में हस्तक्षेप करने की कोशिश भी करता है - "हम अपनी संतानों को क्या सिखा दिया है कि अकबर महान है ?

अकबर तो क्रूर विदेशी था । अंग्रेज था । हमें आवश्यकता है गुरुकुलों की ।"[40] वहीं दूसरी ओर मठ लोगों को बाकायदा हथियार चलाने का प्रशिक्षण दे रहा है । मठ के लाउडस्पीकर का शोर विश्वविद्याल य में लगातार आता रहता है । उसे सुन कर कुछ प्राध्यापक अपनी कक्षा के कमरों की खिड़कियाँ बंद कर लेते हैं । कुछ विद्यार्थी बातें कर रहें है - "आज सुना । सारे नाम बदलने की बात कह रहे थे । ऐसे नाम । यूनिवर्सिटी का नाम भी जल्दी ही अटैक करंगे ।"[41] उन सभी चीजो के नाम बदले जाते है, जिनसे मुस्लिम शब्द का बोध होता है । छात्र इसी विषय पर बातें कर रहें हैं ।

इनका विशेष प्रयोजन है कि विभाग के शिक्षकों और विद्यार्थियों के बीच धर्म के आधार पर तनाव बढ़ाना, उनमें फूट डालना, साथ ही अध्ययन-अध्यापन को तबाह करना । शीघ्र ही मठ की गतिविधियाँ का प्रभाव विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं पर भी पड़ने लगता है । शहर की ही तरह विश्वविद्यालय भी साम्प्रदायिकता की आग की चपेट में आ जाता है । जिसका शिकार हनीफ़ होता है । समाजशास्त्र विभाग में अध्यक्ष बनने की बारी हनीफ़ की है । वह बनते-बनते नहीं बन पाता क्योंकि वह एक ऐसा नाम था, जिसका शहर में छिड़े दंगों से मतलब था । वह एक मुसलमान था । बहुत विड़म्बना है हनीफ़ जो अपने आप को मुसलमान नहीं, बल्कि दोनों धर्मो से हटकर तीसरी जमात का मानता है । जिसमें पढ़े-लिखे बुद्धिजीवी, धर्म-निरपेक्ष आदि विचारधाराओं के व्यक्ति हैं । उसके बावजूद विश्वविद्यालय का माहौल उसके खिलाफ हो जाता है।

मठ का धीरे-धीरे हस्तक्षेप विश्वविद्यालय की गतिविधियों में भी होने लगता है । विश्वविद्यालय में अखिल भारतीय वीर दल की छात्र शाखा खुलती है । सभा के उद्घाटन के लिए मठ के महंत को अतिथि बनाया जाता है ।

विभागाध्यक्ष नंदन में द्वेष, ईर्ष्या की भावना और अधिक बढ़ने लगती है जब हनीफ़ की किताब को पुरष्कार मिलने वाला होता है - "शिक्षा-परिषद् ने हनीफ़ की किताब को इस वर्ष की समाज विज्ञान के क्षेत्र की सर्वोत्तम कृति घोषित किया है । कल समारोह है, जहाँ उसे पुरस्कार दिया जाएगा ।"[42] हनीफ़, नंदन के अन्दर की ईर्ष्या की भावना से अच्छी तरह से अवगत है । वह समारोह

में जाने के लिए अनुमति लेता है । ऑफिस में चिठ्ठियाँ बहुत गायब होती हैं । नंदन कुछ गड़बड़ जरुर करेगा ।

हनीफ़ को पेरिस की ओर से एक संगोष्ठी का निमंत्रण मिला है । जिस कारण विभाग के अन्य प्राध्यापक हनीफ़ से खीझ जाते हैं और मौका मिलते ही ताना मारने लगते हैं । विभागाध्यक्ष नंदन हनीफ़ को प्रोत्साहन करने की बजाए उसे ही अन्य प्राध्यापक के सामने खरी-खोटी सुनाता है - "किसी और विभाग से आप लेकर दिखाइए ऐसी आजादी ? जब चाहे उठकर चल दिए, इस सेमिनार, उस स्टडी टूर पर ....छोटे जोश भी विभागाध्यक्ष नंदन का साथ देते हुए कहते हैं - आप लोग तो सेमिनार में जाना, पुरस्कार पाना, स्टूडेंट को ढीठ बनाना, इसी को डिपार्टमेंट का काम मानते है ।.....उर्मिला भी लड़ाई के तेवर दिखती हुई कहती है - विभागाध्यक्ष साहब ने यहाँ रीडिंग रूम, ओरकाइवल सैल, माइक्रो फिल्म रीडर लिए हैं, कितना नाम है डिपार्टमेंट का ।"[43]

बहुत समय से ही विभाग में चर्चा है कि हनीफ़ बर्लिन (जर्मन) संगोष्ठी के लिए जाने वाला है । हनीफ़ विभाग में छुट्टी की अर्जी देता है । इस पर विभागाध्यक्ष नंदन, हनीफ़ की अर्जी पर ऐतराज करते है । साथ ही बहाना बनाने की कोशिश करता है - "ऐन वक्त पर अर्जी क्यों आई है, पहले से क्यों नहीं, कि उस पर सोचा जा सकें ? ... (हनीफ़) मैने तो हर बार की तरह इस बार भी लेटर आपको भेज दिया था ... (नंदन) वी.सी. न माने तो ? .... हालांकि वी.सी. ने कभी ऐतराज नहीं किया (हनीफ़) ... आप इतना बाहर जाते है तो दूसरे क्यों नहीं ? इसी से मनमुटाव पैदा होता है । विभागाध्यक्ष की हैसियत से मुझे डिपार्टमेंट में ईर्ष्या-द्वेष रोकना है । पहले से अप्लाई करें तो समय रहेगा की ...।"[44] नंदन हर कोशिश करता है कि हनीफ़ संगोष्ठी के लिए न जाए ।

विश्वविद्यालय का बी.ए. फाइनल का विद्यार्थी साम्प्रदायिक मानसिकता की भावना से ग्रस्त है । मुस्लिम धर्म के विषय में उसका मानना है - "वे जब इतने से है, तब इतना अकड़ रहें हैं, जब उतने होंगे, तब कितना अकड़ेंगें । सन् सैंतालीस से हम इनकी धौंस सह रहें हैं । इससे अच्छे तो हम ब्रिटिस राज में थे । आप समझ रहें हैं न कि मैं क्या कह रहा हूँ ? यानि की हम मानने लगे है कि गुलामी भी बेहतर है ।"[45] इस तरह की संकुचित

विचारधारा ही समाज के स्तर को और गिरा देती है । जब एक पढ़ा लिखा छात्र इस तरह की बात करेगा तो हम अनपढ़ लोगों से क्या उम्मींद लगा सकते हैं । निस्संदेह 'वे' 'इनकी' शब्द मुसलमानों के लिए अपनाया गया है । उस बरस शहर में पढ़े-लिखे नौजवान भी सांप्रदायिक मानसिकता का शिकार होने लगते हैं । उनकी इसी विचारधारा से हम अनुमान लगा सकते हैं कि समाज किस प्रकार त्रस्त हो चूका है ।

शहर में पोस्टर वार शुरू हो जाता है । विश्वविद्यालय के दो छात्राओं डिपार्टमेंट के नोटिस बोर्ड पर पोस्टर चिपका देते हैं । उनकी बहुत सारी कॉपी बनवा कर वे जगह-जगह चिपका देते हैं - "पोस्टर में एक तरफ़ मठ के प्रवचनों में दी जाती आँकड़े-युक्त दलीले हैं, दूसरी तरफ़ उसे गलत साबित करते, सन्दर्भ-सहित तथ्य हैं ।"[46]

शरद और हनीफ़ ने लाऊडस्पीकरों के ख़िलाफ़ शिकायत पत्र तैयार करके उस पर विभाग वालों के हस्ताक्षर करवाते है - "मठ वालों के डेमोक्रेटिक हक़ नहीं क्या ? ... "वे उलजलूल कुछ भी बरसा रहें है कि पापियों के मौत का सामना खुद देवी पहुँचा रही है और आपको मसखरी सूझ रही है ।"[47] पर हनीफ़ नंदन से साइन करवा लेता है ।

विभागाध्यक्ष नंदन हनीफ़ के खिलाफ कोई-न-कोई मौका खोजता रहता है, उसके मार्ग में बाधा पहुँचाने के लिए । वह शरद और हनीफ़ को विभाग में 10.00 से 5.00 बजे तक रहने की पाबन्दी लगाने लगता है । जिस कारण शरद और हनीफ़ विभागाध्यक्ष नंदन के पास जाते है, उन्हें समझाते हुए कहते है - "क्यों वे सुबह से शाम डिपार्टमेंट में बैठने की पाबंदी हैं । इस जगह आत्मा घुटेगी और कुछ नहीं । लोगों को काम करना है तो काम का माहौल ही उनसे काम कराएगा, ज़बरदस्ती आप किसी को नहीं बदल सकते । बदलाव अन्दर से होना चाहिए, न की रुल थोपने से - ये तो नाहक ही शक-शुबहों का मौसम पैदा करेंगे ।"[48] विभागाध्यक्ष नंदन विभाग में एक के बाद एक नए-नए नियम लागू करने लगता है - "शक ही तो कर रहे हैं लोग... कुछ लोगों को ज्यादा छूट मिल रही है, कुछ सुबह से शाम पीले रहते हैं यहाँ ।"[49] नंदन का 'कुछ' शब्द से मतलब हनीफ़ से है । शरद इसका विरोध करता है - "अभी तो आप है ...

आपके बाद यही रुल इस्तेमाल होंगे धौंसबाजी के लिए, लोगों को दबाने के लिए ।"[50]

विभाग को एक खास इज़ाज़त मिलती है 'पीस मार्च के लिए' । बाबू पेंटर कहते हैं कि अख़बार में इश्तिहार देते हैं, जो हमारे साथ है, साथ में आएँ । लेकिन साथ में बहस चल रही है कि शांति मार्च में पोस्टर को लेकर हनीफ़ और एक-दो छात्र-छात्राएँ मुशीर और तसलीमा आगे रहेंगे या पीछे । प्रश्न यहाँ यह है कि क्या अमन की शांति मुसलमानों को ही चाहिए हिन्दुओं को नहीं, क्यों नहीं शरद, छोटे जोश और हनीफ़ साथ-साथ, हिन्दू और मुस्लमान छात्र-छात्राएँ साथ-साथ आगे-पीछे चलें और शांति, चैन, अमन का सन्देश देकर भाईचारे का सन्देश दें ।

एक छात्र कश्मीर का उदाहरण देकर कहता है - "हम यहाँ सेक्युलरिज्म, सेक्युलरिज्म की दुहाई दे रहे हैं । वहाँ कितनी निर्ममता से औरतों-बच्चों, किसी को भी उड़ाया जा रहा है । साँप पाल रहे है । ... बाहर निकलिए तो पता चलेगा ऐकेडेमिक न कुछ कभी था, न होगा, किताबी लफ्फाज़ी और लीपा-पोती है ये । बाहर सब नंगा है ।"[51] छात्र, इन वाक्य को मुसलमानों के लिए प्रयोग कर रहा है । पढ़े-लिखे छात्र ही समाज में ऐसी सोच रख रहे है तो समाज का विकास कैसे होगा ? हिन्दू और मुसलमान दोनों ही तो समाज के अंग हैं ।

विभागाध्यक्ष नंदन बड़ी ही चालाकी से अपनी बातों में शरद को फंसा लेता है । शरद को हनीफ़ के खिलाफ कर लेता है । शरद के पीछे खड़े होकर, नंदन, उसे आगे कर के हनीफ़ के खिलाफ बुलवाता है । बुरा शरद बने, बदनामी भी शरद की हो । हनीफ़ को इस विषय के बारे में पता है । वह शरद को इस बारे में सचेत भी करने की कोशिश भी करता है । शरद पर उसका कोई असर नहीं होता । वह वहीँ मान लेता है जो विभागाध्यक्ष नंदन ने उसे बताया है । धीरे-धीरे शरद और हनीफ़ के बीच दूरियाँ बढ़ने लगती है । शरद की विभागाध्यक्ष नंदन से नजदीकियाँ बढ़ने लगती है । विभाग में एक छात्रा जिसके पिता की ख़राब तबियत होने के कारण वह कक्षा में उपस्थित नहीं हो सकी । उसकी हाजरी कम होने के कारण उसको परीक्षा में बैठने नहीं दिया जा रहा था । वह परीक्षा देने की अनुमति के लिए अर्जी विभागाध्यक्ष साहब को देती है,

उसी समय हनीफ़ वहाँ आ जाता है । सारी बातों को जानने के बाद हनीफ़ उस छात्रा की अर्जी फाड़ देता है । उसे परीक्षा की तैयारी के लिए कहता है । परीक्षा के लिए किसी प्रकार की ओर सहायता (नोट्स) के लिए भी उससे पूछता है । छात्रा खुश होकर वहाँ से चली जाती है । इस घटना को विभागाध्यक्ष नंदन तोड़-मरोड़ कर शरद के सामने एक अलग ही ढंग से पेश करता है । शरद विभागाध्यक्ष नंदन की बातों में आकर आग बबूला हो जाता है - "अब छात्राओं के साथ भी अपनी दिखा रहें हैं । ... मैं इनकी पेशी करता फिरू की बुरे नहीं हैं, सिर्फ ... क्यों इतनी ऊँचाई पर चढ़े रहते हो ? आव देखा न ताव, सुना अपनी स्टूडेंट की एप्लिकेशन की चिंदियाँ करके टुकड़े बेचारी छात्रा को पकड़ाए और शान से चलते बने ।"[52]

विभागाध्यक्ष नंदन का कुचक्र काम करने लगता है । विभाग में धीरे-धीरे सब लोग हनीफ़ के खिलाफ हो जाते हैं । हनीफ़ के हर कार्य पर ऐतराज करने लगते हैं । शरद को इसकी भनक है । वह हनीफ़ को समझाने की कोशिश भी करता है - "कुछ दिनों के लिए ....ज़रा अपने रंग-ढंग संभाल लो । माहौल बेहतर बिगड़ा है । ऐसी भी क्या मुश्किल, अगर कुछ दिन दस से पाँच वहीं बैठ लो ?"[53] शरद भी नंदन की बातों में आने लगता है ।

कुछ समय के बाद विभाग में रोटेशन की प्रक्रिया लागू होने वाली है । इस विषय में विभाग के कुछ प्राध्यापक ने कहना शुरु कर दिया कि हालात ज्यादा बिगड़ रहे है - "एक-दो बरस के लिए नये कानून न लागू हों, जो बागडोर संभाले है, वही सबसे बेहतर संभाले रख सकता है ।"[54] ये सभी बातें विभागाध्यक्ष नंदन के उकसाने पर बोली जा रही थीं । इन बातों से शहर में छिड़े हिन्दू-मुस्लिम फ़साद से कोई मतलब नहीं था - "हमारे हाथ से एक लड़ाई फिसल गई थी । दोनों सूरतों में हमारी हार थी - हनीफ़ विभागाध्यक्ष बने या न बने । दोनों सूरतों में हनीफ़, हनीफ़ नहीं, एक 'प्रतीक' रह गया था । और इसका शहर में छिड़े दंगों से मतलब था ।"[55] प्रतीक एक मुसलमान होने का । नंदन नहीं चाहता है कि हनीफ़ विभागाध्यक्ष बने ।

शरद और हनीफ़ दोनों शहर में हो रही असहिष्णुता के विषय पर अखबार में लेख लिखते हैं । लेख के जवाब में अखबार में ताबडतोड़ पत्र आते हैं, कुछ

इनके लेख की तारीफ में और कुछ उनके ख़िलाफ़ अखबार में लेख पढ़कर विभागाध्यक्ष नंदन के पास जिलाधीश का फोन आता है कि "मेरी राय के ख़िलाफ़ आप अख़बार में लिख रहे हैं, यह अच्छा नहीं कर रहे ।"[56] जिलाधीश नहीं चाहते है कि विश्वविद्यालय का कोई भी प्राध्यापक साम्प्रदायिकता के बारे में लिखे । उन्हें डर है कि कहीं लेख से जनता न भड़क जाए । इस कारण वे विभागाध्यक्ष नंदन को इस प्रकार के लेख छपवाने के लिए मना करते हैं ।

जहाँ पहले विभागाध्यक्ष साहब बुद्धिजीवियों की अकर्मण्यता के कारण चिंतित थे कि वे शहर में हो रहे साम्प्रदायिक तनाव के बारे में लिखें और लोगों को इस बारे में सचेत करें । वही आज, विभागाध्यक्ष साहब शरद और हनीफ़ को विशेष हिदायत दे रहे हैं - "अब ज़रा डिपार्टमेंट के काम को तवज्जो दी जाए ।"[57] समाज में बहुत से विभागाध्यक्ष साहब नंदन जैसे ही कुछ बुद्धिजीवी होते हैं जो दोहन की नीति अपनाते हैं ।

विभागाध्यक्ष नंदन विभाग में एक स्टाफ मीटिंग बुलाता है । बहस करने के लिए की अगले विभागाध्यक्ष का उम्मीदवार कौन होगा ? सब की राय जानने के लिए । हालांकि स्पष्ट रूप से पहले ही तय था की अगली बारी कायदे से हनीफ़ की है फिर भी विभागाध्यक्ष नंदन सबकी राय चाहते हैं - "दो साल रुकने की कोई ज़रूरत नहीं है । अभी से रोटेशन शुरू होगा ....खुद-ब-खुद अगली पीढ़ी से नए चालक उठते हैं । बहरहाल, इस पर आप क्या सोचते हैं, खुलकर बताएँ ।"[58] इसके बाद सभी बारी-बारी अपनी राय देते हैं, पहले -"उर्मिला सोचती हैं कि डिपार्टमेंट में भी बाहर की गतिविधियों का असर है और गुटबाज़ी और उद्दंडता शुरू हो गई है, इस समय हेड-वेड की फेर बदल से गड़बड़ी बढ़ेगी ।"[59] उर्मिला विभागाध्यक्ष नंदन का समर्थन करती है और चाहती है कि वे ही विभागाध्यक्ष बने रहें । शुरू से ही उर्मिला हनीफ़ को नापसंद करती है । छोटे जोश भी विभागाध्यक्ष नंदन के समर्थक हैं वे भी चाहते हैं कि विभागाध्यक्ष नन्दन ही बने रहें - "पहले की नया विभागाध्यक्ष विभाग पैर जमा पाए ... करैंट क्राइसिस उस पर हावी होगी । वह भी परेशान होगा, डिपार्टमेंट की भी शामत आएगी ।"[60]

विभागाध्यक्ष नंदन शरद को उकसाता है शरद - "मैं समझ नहीं पा रहा ... हम क्या कहना चाह रहें हैं ?... इस डिपार्टमेंट में सर्व-सम्मति से काम होता

है, उसी पर हस्ताक्षर करते हैं, नंदन साहब । यही बात अगले विभागाध्यक्ष साहब के लिए भी रहेंगी तो उसे नई दिक्कतों का सामना करना होगा, यह सब बेबुनियाद बक ... डर है । शरद का सीधा इशारा उर्मिला और छोटे जोश की राय पर है । शरद के अनुसार सभी को पता है कि अगली बारी विभागाध्यक्ष की हनीफ़ की है । सभी विभाग के प्राध्यापक मिलकर हनीफ़ के साथ काम करेंगे, सभी कार्य सर्वसम्मति से होंगे तो कोई परेशानी, डर नहीं है ये सब बकवास है । शरद चाहता है कि विभागाध्यक्ष हनीफ़ ही बने नहीं तो हनीफ़ के साथ इंसाफ़ नहीं होगा । शरद के बाद एक प्राध्यापक अपनी राय देते हैं कि - "बाहर का जो माहौल है, उसमें और जरूरी है कि डॉक्टर हनीफ़ अगला पद सँभाले, नहीं तो कोई भी फैला देगा की उनके मुस्लिम होने के कारण ... छोटे जोश गुस्से से "मुझे बहुत सख्त ऐतराज़ है । अभी-अभी उर्मिला ने जो कहा, कितना सही है कि बाहर की राजनीति और सोच हम यहाँ घुसाने लगे हैं ।"[61] विभाग में दो गुट बन जाते है । एक गुट चाहता है कि हनीफ़ विभागाध्यक्ष बने और दूसरा गुट नहीं चाहता वह विभागाध्यक्ष बने ।

विभाग के सभी सदस्यों की राय रखने के बाद अगली बारी हनीफ़ की आती है । सब की राय जानने के बाद । हनीफ़ अपनी राय रखता है । हनीफ़ की राय सब से अलग है । वह विभागाध्यक्ष नहीं बनाना चाहता । किसी के हाथ की कठपुतली नहीं बनाना चाहता । वह अच्छे से जानता है कि यदि वह विभागाध्यक्ष बना तो नंदन उसके हर कम में हस्तक्षेप करेंगे - "कुछ तो जरुर हो रहा है इस डिपार्टमेंट में ... और जब से रोटेशन की बात हुई है, और ज्यादा ... मैं देख रहा हूँ कि अब तो हमारे पास में इख्तलाफ़ होते हैं, वे भी ख़ास तरह से देखे जाने लगे हैं ....ह....में...कुछ लोगों की राय उनकी जाति राय उनके जाति फ़ायदे के लिए मानी जाती है, दूसरों की राय विभाग को मद्देनज़र रखकर कायम हुई मानी जाती है । मुझे इस डिपार्टमेंट पर ईमान रहा है ... मुझे तकलीफ़ होती है .....विभागाध्यक्ष बनकर मैं कठपुतली रहूँगा और जो मैं नहीं चाहता, उन बातों पर, मेरे दस्तख़त लिए जाएँगे ।"[62] हनीफ़ की राय सुनकर विभागाध्यक्ष नंदन आग बबूला हो जाते है ।

आज विभाग में विद्यार्थियों और प्राध्यापकों के बीच तनाव और खीझ का माहौल है । इसका प्रभाव प्राध्यापक और विद्यार्थियों के बीच रिश्ते पर भी पड़ रहा है । दोनों के बीच दूरियाँ आ रही हैं, कुछ बाहरी साम्प्रदायिक गतिविधियों द्वारा, और कुछ विश्वविद्यालय की आंतरिक गतिविधियों द्वारा । विश्वविद्यालय में तनाव पैदा हो रहा है । शरद इसी तनाव की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि - "हम भी तो सोंचे की हमें क्या हो रहा है, जो असहमति सुनते ही भड़क जाते हैं । छात्राओं ने बढ़-चढ़कर बोलना शुरू किया और हम उन्हें उनकी औकात में रखने के लिए नियम माँगने लगे ।"[63] शरद अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए कहते है कि "क्या हो रहा है इस डिपार्टमेंट में ? जो चीजें पहले अच्छी मानी जाती थीं, आज इनडीसिप्लिन करार दी जा रही है .... पहले भी छात्राओं को हम स्टाफ़ के साथ चाय पीने को बढ़ावा देते थे । अब उस पर रोकथाम लगाना चाहते हैं, क्यों ?"[64] शरद उन छात्र-छात्राओं के बारे में बात कर रहे हैं, जो हनीफ़ और शरद के साथ बातचीत करते थे लेकिन विभाग की और से प्राध्यापक और छात्राओं का आपसी मेल-मिलाप बंद कर दिया जाता है ।

धीरे-धीरे चल रही विश्वविद्यालय के आंतरिक राजनीति टकराव के कारण हनीफ़ के दिल पर ठेस पहूँचने लगती है । हनीफ़ कक्षा को पढ़ाने के बाद सीधे अब अपने कमरे में चले जाते हैं, ज्यादा समय वे चुप रहने लगे । पहले कोई भी मुद्दा हो उस पर दलीलें देकर सामने वाले को चुप करवा देते थे । अब हनीफ़ शांत रहने लगे हैं । विभाग के अन्य लोग हनीफ़ के अकेलेपन और शांत रहने का एक अन्य अर्थ निकाल लेते हैं । शरद और हनीफ़ किसी बात को लेकर झगड़ा करते हैं । शरद, हनीफ़ के बारे में बात कर रहा है - "क्यों यह ऐसा करता है ? जैसे सारे डिपार्टमेंट वाले इसके पीछे पड़ रहें हैं ।"[65] हनीफ़ का व्यवहार धीरे-धीरे बदलने लगता है । उसे अकेलापन महसूस होने लगता है । शरद, हनीफ़ को समझ कर भी उसको समझ नहीं पा रहा । हनीफ़ किन परिस्थिति से गुजर रहा है । विभागाध्यक्ष नंदन विभाग में अपना नियंत्रण रखने के लिए नए-नए नियम विभाग में लागू करता है । एक नया नियम, महिला प्राध्यापिकाओं के लिए है - "सारी लेडीज से भी कहा की भरसक साड़ी पहन कर आएँ ..।"[66]

शरद और हनीफ़ दोनों का शहर में फैली असहिष्णुता के विषय पर लेख अख़बार में छपता है । विभागाध्यक्ष नंदन चिढ़ कर कहते हैं - "आपका हवाला देकर लोग तिल का ताड़ बनाते फिर रहे हैं । नंदन के सर पर फितूर सवार है कि - "इस तरह के लेख डिपार्टमेंट को बदनाम कर रहें हैं । और साथ ही अपने मकसद को काट रहे हैं ।"[67] शरद और हनीफ़ इससे सहमत नहीं हैं । शरद, विभागाध्यक्ष नंदन से कहता है - "मगर रोज़मर्रा को लेकर चौकन्नापन भी जरुरी है ... आज हिन्दू आक्रामक लग रहे हैं, मुसलमान उसका शिकार, मगर बात इतनी साधारण तो नहीं हो सकती । तहों में जाने की जरूरत है, वह बात जटिल है ।"[68] हनीफ़ शरद का साथ देकर कहता है - "यह कोम्प्लेक्सीटी की दलील इसके बुरे को उसके बुरे से काट देने के काम लाई जा रही है ।"[69] शरद चाहता है कि हमारा इतिहास जो अपने साम्प्रदायिक विचारों के लिए तोड़ते-मरोड़ते है ... कहीं हम भी झूठा इतिहास तो नहीं गढ़ रहे । शरद का मानना है कि सरलीकरण की गलती हमें नहीं करनी चाहिए । जो समाज में सबके सामने है, उसी को सबके सामने लाना जरुरी है । शरद के विचारों को सुन कर विभागाध्यक्ष नंदन, हनीफ़ से इस विषय में पूछता है । नंदन के चहरे पर सवाल-जवाब के अलावा एक अलग ही रुचि दिखती है, वह हनीफ़ के भावों को पढ़ने में ज्यादा ही रुचि ले रहा हो । नंदन को हल्का-हल्का मज़ा आने लगा है । उसे ऐसा लगता है कि शरद हनीफ़ का दोस्त ऐसे मुद्दे पर हनीफ़ की मुखालफत कर दी और हनीफ़ फँसा-फँसा महसूस का रहा है ।

हिन्दू और मुसलमानों के आपसी संबंधों को लेकर । शहर में सभा का आयोजन किया जाता है । जिसमें शरद और हनीफ़ दोनों ही भाषण देने जाते हैं । शरद भाषण देता है पर हनीफ़ मुसलमान होने के कारण, अपना भाषण नहीं दे पता । अगले दिन विभाग में अन्य प्राध्यापक इसका मज़ाक उड़ाते हैं - "सुना है मुसलमानों ने पत्थर मारकर आपकी सभा भंग कर दी ?"[70] सभी को पता है पत्थर मरने वाला जै-जगदम्बे का नारा लगा रहा था परन्तु जलती हुई आग में घी डालना कुछ लोगों को ख़ुशी मिलती है । दूसरे के दुःख में उन्हीं ख़ुशी मिलती है । कितनी विड़म्बना है ये सब कार्य आजकल बुद्धिजीवी भी जोरों शोरों से कर रहें हैं ।

विभाग में विभागाध्यक्ष नंदन और उर्मिला दोनों सीढियों पर बातें कर रहे हैं । वे इतने जोर से बोल रहें हैं कि उन दोनों की आवाज हनीफ़ तक जा सके । विभागाध्यक्ष नंदन - "यह समय टॉक-वाक देकर हीरो बनने का नहीं है .... हम हिन्दुओं के सेंटिमेंट्स को कब तक अनदेखा करेंगे ? मुसलमान तो करते ही हैं, हम भी कर रहे हैं । एक मुसलमान बता दीजिए जो हिन्दू हित की बात कर रहे है ।"[71] दोनों का मकसद है, हनीफ़ को और अधिक दुखी और हताश करना ।

विभागाध्यक्ष नंदन की बातों से साफ़ स्पष्ट है वे हनीफ़ की ओर इशारा करके उन्हें मानसिक यातना देना चाहते हैं । उन्हें स्वयं भली- भांति पता है कि हनीफ़ एक ऐसे व्यक्ति हैं, जो हिन्दू और मुस्लमान में भेद नहीं करता । यदि किसी भी धर्म में कमियाँ आती हैं तो वह उसमें सुधार लाने का प्रयास करता है लोगों का ध्यान उस तरफ ले कर जाता है । विभागाध्यक्ष नंदन एक छ्द्म प्रवत्ति का व्यक्ति है जो केवल अपनी स्वार्थ की पूर्ति हेतु दूसरो को नीचा दिखने का कोई भी अवसर नहीं छोड़ता । वही उर्मिला विभागाध्यक्ष नंदन की हर बात चाहे वह गलत ही क्यों न हो उसका समर्थन करती है । उर्मिला विभागाध्यक्ष की बातों को आगे बढ़ाते हुए कहती है - "और हमारे जग प्रसिद्ध तरक्की पसंद मुसलमान भी अपने ही हितों की माँग करते हैं ।"[72]

विभाग में हनीफ़ के लिए एक छोटा-सा खत आया है । ख़त कोई भी भेज सकता है विभाग के अन्दर या बाहर से । हनीफ़ से ही माफ़ी माँगने पर ज़ोर दे रहा है, जबकि लेख तो शरद ने भी साथ लिखा था - "हनीफ़ से कहों, माफ़ी माँगे ।"[73] विभाग की डाक में । डाक पर टिकट नहीं है और न ही मोहर है । ख़त को टाइप किया गया है । शरद और हनीफ़ दोनों ने ही, धर्म के नाम पर शहर में जो धांधली हो रही है उस विषय पर अपना लेख अखबार में छपवाया था । दोनों ने एक साथ अपना नाम भी दिया । उग्र तत्त्व, शरद को हिन्दू होने के कारण छोड़ देते है और हनीफ़ को मुसलमान होने के कारण, जानबूझ कर निशाना बनाते हैं ।

हनीफ़ के खिलाफ खतों के आने का सिलसला बढ़ने लगता हैं । बहुत से छात्र भड़क भी जाते हैं । रोज़ ख़त आ रहें हैं । विश्वविद्यालय के खिलाफ

पोस्टर भी जगह-जगह चिपके हुए मिलते है छात्र आपस में कह रहे हैं । कुछ तो करना चाहिए । हम चुप नहीं बैठ सकते ।

सभी छात्र-छात्राएँ मिलकर जुलूस निकालते हैं । जुलूस विश्वविद्यालय से शुरू होकर मठ के आगे से गुजरते हुए, कचहरी के सामने, अखबार के ऑफिस के आगे, फिर वापिस लौटकर वाइस चांसलर के ऑफिस तक जाता है । ऑफिस के बाहर छात्र-छात्राएँ धरने पर बैठते हैं । वे तीन शर्तें रखते हैं । पहली, मठ साम्प्रदायिक आग जो लगा रहा है । उस पर रोकथाम की जाए । दूसरी, ओपन डिबेट आवर मोटो, तीसरी, अखबार का सनसनीखेज रवैए को रोका जाए ।

विश्वविद्यालय के ए.बी.वी.पी. छात्राओं का पत्र अखबार में छपता है । वह सीधे-तौर से मठ पर निशाना लगाते हुए लिखते हैं - "यह साम्प्रदायिकता के जहर को फैला रहे हैं ... हम यूनिवर्सिटी में पढ़ने आते हैं । यहाँ यह राजनीति घुस रही है ।... आज तक हम यही जानते थे कि हम हिन्दुस्तानी हैं, छात्राओं को गुमराह करके उन्हें धर्म के बैरी बना रहे हैं ।"[74] बहुत से विद्यार्थी तंग हो गए हैं । चाहते है कि अब साम्प्रदायिकता की आग जो शहर को जला रही है । उसे शांत किया जाए । सभी जानते हैं कि यह आग मठ द्वारा फैलाई गई है । अब इस आग को रोका जाए । एक धर्म को दूसरे धर्म के विरुद्ध द्वेष की भावना को खत्म किया जाना चाहिए ।

साम्प्रदायिकता की आग को भड़काने में अखबार के संपादक की भी महत्वपूर्ण भूमिका है । आए दिन हनीफ़ को, माँफी मागने वाले ख़त अख़बार में छापते रहते हैं । जिससे विभाग का माहौल तनाव ग्रस्त हो जाता है । इससे परेशान होकर सभी विभाग के सदस्य तय करते हैं, माँफी मागने के लिए सभी विभाग के प्राध्यापक माँफी नांमा पर हस्ताक्षर करेंगे । सभी हस्ताक्षर भी करते हैं, अख़बार का संपादक छद्म प्रवृत्ति का व्यक्ति होता है । उसने उस खत के अर्थ को ही बदलकर, हनीफ़ के हस्ताक्षर हटा कर इस प्रकार ख़त को प्रकाशित किया है । जो उस ख़त को पढ़े, वह हनीफ़ को ही कसूरवार ठहराने लगे । परिणाम स्वरुप विभाग के अलावा भी बाहरी साम्प्रदायिक तत्त्व हनीफ़ को अपना शिकार बनाने लगते हैं । हनीफ़ के खिलाफ पहले विभाग होता है और बाद में धीरे-धीरे सभी होने लगते हैं ।

विभागाध्यक्ष नंदन विभाग के प्राध्यापको को भड़काने के साथ-साथ छात्राओं को भी भड़काने की कोशिश करता है । छात्र यूनियन, नंदन के उकसाने पर हनीफ़ के खिलाफ़ एक रेज़ोल्यूशन पास करती है । हनीफ़ को विश्वविद्यालय से बर्खास्त किया जाए । जिसे सुन कर शरद, श्रुति और दद्दू सन्न रह जाते हैं ।

हनीफ़ के खिलाफ एक षडयंत्र के तहत एक ख़त अखबार में छपता है । उस ख़त में हनीफ़ पर आरोप लगाया जाता है कि पंद्रह बरस पहले वह हनीफ़ से किसी डिनर पर मिला था । उसमें हनीफ़ ने पाकिस्तान की हिमायत की थी, लेकिन हनीफ़ का कहना उसे कोई डिनर याद नहीं है । शरद को विभागाध्यक्ष नंदन पर थोडा शक है कहीं ये कार्य उसका तो नहीं, अखबार में पत्र छपवाने का । शरद विभागाध्यक्ष नंदन के मुहँ के सामने अख़बार फड़फड़ा कर पूछता है । आप अब नहीं बोलेंगे? विभागाध्यक्ष नंदन बातों को घुमा-फिरा कर करने लगता है ।

विभागाध्यक्ष नंदन हनीफ़ के बारे में बोलता है - “जो शख्स पूरी दुनिया के मशीनरी को अपने पीछे खड़ा करके सामना कर रहा है । उसे आप विक्टिम बता रहे हैं ? हममें से कोई होता तो कब का लुट-पिट चुका होता ।”[75] विभागाध्यक्ष नंदन के वाक्य से साफ झलकता है कि वह हनीफ़ को मानसिक तनाव देना चाहता है । नन्दन को अच्छे से पता है कि हनीफ़ एक धर्म निरपेक्ष व्यक्ति है, लेकिन बार-बार उसे परेशान करने के लिए कटाक्ष करता है ।

हनीफ़ से माफ़ी मँगवाने में शहर के ही नामी लोग भी हैं - “माफ़ी माँगो, अख़बार में बहुत-से हस्ताक्षरों के साथ पत्र आया है । उनमें कुछ नाम दद्दू पहचानते हैं । कह रहे हैं, शहर के वरिष्ठ लोग हैं, देवी भक्त हैं ।”[76] माफ़ी माँगने के साथ ही हनीफ़ के खिलाफ धमकी भी आती है - “हमारे धर्म के पथ भ्रष्टों से निपटना है । बाहर वालों से निपटना है ।”[77] बाहर वाले शब्द से अभिप्राय हनीफ़ से है - “आज के ख़त में धमकी की बू है । माफ़ी माँगो । यह कानूनी जुर्म है । दफ़ा 295 ए के तहत । इन्होंने जनता की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाई है । इन पर मुकदमा चलाया जाए । इन्हें हिरासत में लिया जाए । इनके नाम वारंट निकाले जाएँ ।”[78]

हनीफ़ के खिलाफ जो यूनियन के छात्राओं ने रेजोल्युलशन निकला था उसके खिलाफ एक शोध छात्रा वक्तव्य पर डिपार्टमेंट वालों के दस्तख़त कराती है । नंदन नाखुश है और दस्तखत करने में आना-कानी करते हैं - "मेरे साइन करने, न करने की बात ही नहीं है । एक करे, सब करें, वही बात है । ... "करने में क्या है ? कर दूँगा । ... अब बात यहीं खत्म करिए । उम्र के जोश में बच्चे बेवकूफ़ी करें तो उसे इतना तूल क्यों दें । हमारा काम ... ।"[79] नंदन प्रोटेस्ट के पत्र पर साइन नहीं करते । यूनियन के छात्राओं ने जो हनीफ़ के खिलाफ जो रेजोल्युलशन पास किया था वह उसी के कहने पर तो किया था ।

"आज अखबार में पत्र है कि 'हनीफ़ ने खुद अपने घमंड और जुझारूपन के कारण इस संरजाम को आमंत्रण दिया है कि वह क्लास में भी राजनीति करने लगे थे, हिन्दू धर्म के ख़िलाफ़ लेक्चर दे रहे थे, 'छात्राओं को हम उच्च शिक्षा पाने उनके पास भेजते हैं कि दंगा-फ़साद सीखने?"[80] हनीफ़ के खिलाफ अख़बार में ये खबर विभाग के ही किसी सदस्य ने छपवाई है । वास्तव में, हनीफ़ धर्म निरपेक्ष की भावना में विश्वास करता है । वह ऐसा कोई भी काम नहीं करता, जो साम्प्रदायिकता की भावना को भड़काए ।

विभागाध्यक्ष नंदन छात्राओं का पेटीशन लेकर आता है । शरद के पास "छात्र परेशान हैं कि उनके डिपार्टमेंट को राजनीति और साम्प्रदायिकता का मैदान क्यों बनाया जा रहा है । ... 'हाथियों की लड़ाई में घास रौंदी जा रही है ... हमारी पढ़ाई में अवरोध पैदा किया जा रहा है ।"[81] विभागाध्यक्ष नंदन शरद को हनीफ़ के खिलाफ करने के लिए सब षड़यंत्र रचता है ।

विभागाध्यक्ष नंदन के ही कहने पर बी.ए.के चौदह छात्र, हनीफ़ के सेक्शन से हटना चाहते है - "उन्होंने इजाजत माँगी है कि इस सेमेस्टर से उन्हें हनीफ़ के सेक्शन से हट जाने दिया जाए और प्रोफ़ेसर नंदन और उर्मिला के सेक्शन में जाने दिया जाए ।"[82] छात्राओं को हनीफ़ के सेक्शन से हटने से उसे बहुत दुःख होता है । इतना की वह फूट-फूटकर रोने लगता है । हनीफ़ एक साहसी और निडर व्यक्ति है । जब विभाग के लगभग सभी प्राध्यापक उसके खिलाफ हो गए थे, अख़बार में उसे धमकी भरे ख़त मिल रहे थे, वह उस समय भी इतना विचलित नहीं हुआ था । जितना छात्राओं के सेक्शन बदलने से होता है । वह

समझ ही नहीं पा रहा था की छात्राओं ने ऐसा क्यों किया - "किसी ने भड़काया होगा या नहीं । नापसंद होंगे मेरे लेक्चर । या डरते होंगे मुझसे ।"[83] हनीफ़, श्रुति से पूछता है । वह अन्दर से टूट जाता है ।

विभाग में शरद और छात्राओं के जोश से भरी, सेक्युलर को लेकर बहस छिड़ी हुई है । छात्र ने केसरिया पट्टा बाँध रखा है । वह चीखते हुए कहता है - "एक भी मुसलमान नहीं बोलता है । खोमेणी, शाह बानो, किसी इशू पर । जितना पढ़ा-लिखा होता है, उतना पंगु ।"[84] हनीफ़ अपने ऑफिस में शांत बैठा सब सुनता है । अचानक वह वहाँ पहुँच जाता है । तेज़ आवाज में बोलता है, "हमने हमेशा कहा कि हम एक तीसरी जमात हैं, जिसमें तरह-तरह के मतों वाले लोग शामिल हैं । खोमेणी, शाह बानो, वगैरह पर जिन लोगों ने बगावत की आवाज़ उठाई है, उनमें मुसलमान भी हैं क्यों तुम, "वह केसरिया पट्टे वाले छात्र से नज़रें मिलाता है, सिर्फ मुसलमानों को एकदम अलग तलाश रहे हो ?"[85] हनीफ़ बहुत दिनों के बाद बोलता है । उसकी आवाज सुन कर कई छात्र और टीचर भी आ जाते हैं । पट्टे पहने छात्र हनीफ़ को गुस्से से देखता है ।

हनीफ़ के घर के बाहर वही केसरिया पट्टे लगाए छात्र रंग उड़ाते हुए टैम्पो में लद कर जाते हैं । जाते समय एक युवक उतरकर गेरुआ पताका फाटक पर खोंसता वापस अपने साथियों में मिल जाता है । कुछ दिनों बाद वही जवानों की टोली हनीफ़ के घर, तिलक लगाए, पट्टा बाँधे आती है । आते ही "कहाँ है वह हरामी पिल्ला ?"[86] अपने प्राध्यापक को गालियों से पुकारते हुए आते हैं - "निकालो उसे बाहर, हमारा टीचर कहलाने वाला ।"[87] साम्प्रदायिकता की आग में वे गुरु और शिष्य का ही रिश्ता भूल गए । जिस देश में गुरु को भगवान के समान समझा जाता है उसी देश के कुछ स्वार्थी लोग, युवा पीढ़ी को भड़का रहे हैं ।

(ग) धार्मिक राजनीति :

'धर्म' शब्द - 'धृ' धातु में 'म' प्रत्यय जोड़ने से बना है, जिसका मूल अर्थ है - धारण करना । किसी वस्तु के स्वरूप को धारण करने वाला तत्त्व ही धर्म कहलाता है ।

धर्म साम्प्रदायिकता का कारण तब तक नहीं बनता, जब तक वह व्यक्तिगत बना रहता है और वह राजनीति से दूर रहता है । परन्तु जब धर्म को राजनीति या अन्य किसी स्वार्थ के साथ मिला दिया जाता है, तब वह साम्प्रदायिकता का हथियार बन जाता है ।

धर्म का साम्प्रदायिकता से केवल इतना ही सम्बन्ध है कि साम्प्रदायिकता, राजनीतिक क्षेत्र में धार्मिक भावनाओं का दोहन करती है । एक धर्म के अनुयायियों की गोलबंदी करने के लिए, वह अन्य किसी धर्म के प्रति नफ़रत, घृणा, द्वेष आदि का प्रचार करती है । साम्प्रदायिकता इस तरह धर्म के नाम पर कुछ अपने और कुछ पराये घोषित कर देती है ।

भारतीय समाज में साम्प्रदायिकता को सीधे-सीधे धर्म से जोड़ा जाता है । भारत की धर्म परायण जनता को धर्म के नाम पर जितनी आसानी से भड़काया जा सकता है, उतना अन्य किसी आधार पर नहीं । भारतीय समाज में धर्म का राजनीतिकरण बड़ी तेज गति से हो रहा है । धर्म के नाम पर आम जनता के विश्वास, भीरुता का लाभ उठाने वाले पंडित, मौलवी जैसे लोग अपने स्वार्थ-सिद्धि के लिए धर्म के घेरे को संकुचित कर रहे हैं । जब उसका घेरा संकुचित होने लगता है, तब वह साम्प्रदाय में बदल जाता है । साम्प्रदायिक आधार पर विभाजित दो गुटों के बीच दंगे और मारकाट का मुख्य कारण समाज में मौजूद संकीर्ण राजनीति है, जो दोनों गुटों (हिन्दू और मुस्लिम) को आपस में लड़वाती है । यही राजनीति दोनों सम्प्रदायों के बीच फूट डालो और शासन करो की नीति को अपनाती हैं ।

प्रस्तुत उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में भी गीतांजलि श्री ने धर्म की आड़ में हो रही राजनीति संदेह के वातावरण को प्रस्तुत किया है । शहर का 'मठ' निरंतर हिन्दुओं को मुसलमानों के खिलाफ भड़काता है - "हमारा शहर देश की दंगों - राशि का स्रोत और प्रतिबिम्ब दोनों बना हुआ है । देवी मठ यही है और उसकी शखाएं दूसरे शहरों में फूटती जा रही है । यहाँ घूम लो तो मान लो भारत भ्रमण हो गया ।"[88] शहर का मठ अपनी गतिविधियों द्वारा, सभी का आकर्षण का केंद्र बन जाता है । लोग दूर-दूर से देवी के दर्शन के लिए आते । उस बरस शहर का वातवरण ऐसा प्रतीत होने लगता है जैसे शहर घूम लिए तो

समझो भारत के सभी तीर्थ-स्थान घूम लिए हैं । सांप्रदायिक राजनीति के कारण शहर में आतंक से भरी दुनिया का सृजन होने लगता है । उस बरस शहर में हिन्दुओं ने शांति प्रियता को छोड़ दिया । वे मस्जिदों पर सवार होकर त्रिशूल की नोक पर देवी की पताका फहराने लगे, जो हमारे संग हुआ है, वही हमें उनके साथ करना है । पाप का बदला पाप से चुकाना है । उस बरस साधू संतों ने अपनी पूजा पाठ छोड़ लाऊडस्पीकरों को पकड़ कर चल पड़े । लेखिका ने जुलूस के रूप में हिन्दुओं में साम्प्रदायिकता के बीज बोने और ललकारने का उल्लेख करते हुए कहती है - "हमारी संताने जाती रहीं, हमारी बेटियाँ लूटती रहीं, बेटों, हिजड़े हो क्या ? ए वीर शिवाजी की संतान, भगत सिंह, राणा प्रताप के वंशज, अर्जुन और भीम के पुत्रों उठो । उन दुष्टों की बस्तियों को शमशान बना डालो । बहुत हो गई तुम्हारी भलमनसी दैत्यों-पिशाचों के जुल्म बढ़े तो देवताओं को भी क्रोध आ गया उठो, जागो, बचाओ ।"[89] "जुलूस बना के शहर में निकाल पड़ जत्थे के जत्थे जोर से निकले, भभूत के बादल को उड़ाते हुए, जो कभी धूल बन के हमारी आँखों में किचकिचा जाती, खून बन के हम पर छींटे उछाल देतीं ।"[90]

मठ का शहर में दबदबा बनने लगता है, न तो उन्हें सरकार-प्रशासन का, न ही वर्दिपोश का डर है । वे खुले आम अपनी सांप्रदायिक राजनीति की गतिविधियों को निरतंर आगे बढ़ाते चले जा रहे हैं । खुले आम वे हिन्दुओं को ललकार कर उन्हें मुसलमानों के विरुद्ध भाषण देता हुए आगे बढ़ता जाता है । भाषण के साथ उन्हें भड़का रहा है - "मस्जिदों की गुम्बद पर गेरुआ पताका लगा दो ।"[91] भाषणों के साथ-साथ, अख़बारों में भी साम्प्रदायिक बातों को छपवाता है - "आज का अखबार देखा ? हमें बताया जा रहा है कि वहाँ पहले मंदिर था ।"[92] शहर में भारी-भीड़ के साथ जुलूस जोश खरोश के साथ निकलता है । वे हिन्दुओं को समझा रहें हैं कि - "हिन्दू जागो, देश बचाओं । नहीं तो हम पर अन्याय बढ़ाता जाएगा हमारी रक्त की नदियाँ बहेंगी । बह रही हैं । मंदिर और गुरुद्वारों नष्ट होंगे । हो रहें हैं । हमारी इज्ज़त और संपत्ति लुटी जाएगी, हमारी लड़कियों का सरेआम अपहरण होगा । हो रहा है । लूट रही है ।"[93]

अपने धर्म को बचाने की अपील करते-करते मठ के कार्यकर्त्ता असहिष्णुता का परिचय देते है - "मार तो हिन्दू सारी दुनिया में खा रहा है, क्योंकि वह अति

सहनशील है," जुलूस से चिंघाड़ उठी है - "कायरता दूर करो या हिन्द महासागर में डूब मरो .... क्योंकि और कोई जगह मरने के लिए भी तुम्हारे पास नहीं बचेगी । अपने ही देश में तुम दूसरे और तीसरे दर्जे के नागरिक हो । ओरों के लिए तो पचासों देश हैं, पर हमारे लिए तो बस हिंदुस्तान है ...मगर हिन्दुस्तान तो धर्मशाला बन गया है और हिन्दुओं को ही वहाँ से खदेड़ बाहर किया जा रहा है ।"... कब तक चलेगा यह ? ... अब हम नहीं चलने देंगे ।"[94]

शरद, हनीफ़ और श्रुति तीनों मठ जाते हैं । मठ में मुसलमान का और मस्जिद में हिन्दू का आना वर्जित है । शरद इसी बात से परेशान होने लगता है - "यार, वे तुम्हें अन्दर जाने से रोकेंगे । यार, बुरा लगेगा । मुझे बुरा लगेगा । यार तुम्हें बुरा लगेगा ।"[95]

मठ के कार्यकर्ता कैसिटों के द्वारा अपने भड़काऊ भाषण भर कर लोगों को मुसलमानों के खिलाफ उकसाते हैं - "तुम्हें हमने बराबरी दी, तुमने हमें क्या दिया ? पाकिस्तान । बहुत हो गई दया-धर्म की बातें । अब है वीरता और क्रूरता के दिन । यहाँ रहना था तो रहीम, रसखान बनते, प्यार से दूध में चीनी की तरह, पर निम्बू बनोगे तो क्या होगा ? दूध फटेगा और दूध तो पनीर बनेगा, उसकी कीमत बढ़ेगी, पर नींबू तो कट के, निचुड़ के, सूख के कूड़े में ही फिंकेगा....।"[96]

कैसेट से मठ में हवा को काटते हथियारों की झमक आ रही थी । कान में स्वर चरचरा रहे थे - "हम भर पाए तुम्हारी यह उलटी चालें, यह तुम्हारी हर चीज़ उलट के करने की नीति, हम बाएँ से लिखें तो तुम दाएँ से, हम पूरब को घूमें तो तुम पश्चिम को, हम सूरज को पूजें तो तुम चाँद को, अरे, हम बवाल कहें तो- तुम वबाल । 'झमक' हम कहें टला तो तुम तली । हम खाएँ मुँह से तो तुम.... ।"[97]

उस बरस शहर में देवीमठ के मेलों का बड़ा ज़ोर रहा है । लोगों में देवी माँ के प्रति भक्ति-भावना जाग्रत होती है - "सारा शहर मठ के मेलों में उमड़ने लगा । दुकानों में देवी भक्ति के प्रवचन के कैसेट और किताबें हैं, देवी के रंग-बिरंगे कैलेण्डर हैं, गुलाबी और हरी मालाओं पर देवी के लोकेट झूल रहे हैं, देवी

के चित्र की टिकलियाँ हैं, कंगन हैं, कलम हैं, तरह-तरह के तामझाम हैं । सब पर देवी अंकित ।"[98] हर रूप में देवी के प्रति उत्साह लोगों में भरने के किए । हर जगह जै जगदम्बे के नारे लगते हैं । देवी को सबसे ऊपर का दर्जा दिया जाता है।

अपने धर्म को श्रेष्ट और दूसरे धर्म को निकृष्ट दिखानी की पूरी कोशिश की जाती है - "देवी के चरणों में कलम करके तुम्हारे शीश डाल देंगे ... हमारी जाति नीच अनुदार नहीं है । यह गौरवमय है । धर्मभ्रष्टा दूत हमारी शिक्षा प्रणाली को दूषित का रहें हैं । तीन शब्द तलाक़ तलाक़ तलाक़ और मुक्ति की फिर कहीं और निश्चिंत होकर वासना पूर्ति करेंगे ऐसे-ऐसे ...मरमिटना अपने धर्म के छोटे-बड़ों सबको बराबर मानना दूसरी जातियों का सर्वनाश अपने जीवन का एकमात्र ध्येय बनाना । जिसमें राज्य शुरू किया, उसने पहले की इमारतों पर दूसरी इमारतें खड़ी कर दीं । अपनी फ़तेह का इस तरह ऐलान किया ।"[99] मठ के कार्यकर्त्ता लोगों को मुसलमानों के खिलाफ भड़काने के साथ-साथ, खुद के धर्म की रक्षा करने के लिए, उन्हें हथियार चलाने की भी शिक्षा देते है - "मठ के अखाड़े में कुश्ती, भाला, त्रिशूल, गदा की ट्रेनिगं लंगोटधारियों को दी जा रही है । उससे हवा कटती थी । जो हमारे घरों तक आती थी, वही हवा । शूँ-शूँ करती, जब रातों को घर के बाहर फुफकारती तो श्रुति, हनीफ़ और शरद अक्सर नींद से जग जाते ।"[100]

मठ लाऊडस्पीकरों के माध्यम से लोगों को जता रहें है कि हमारी सभ्यता तभी सुरक्षित रह सकती है । जब शहर में गुरुकुल खुलेंगी - "आवश्यकता गुरुकुलों की है । हमारी सभ्यता संकट में है ।"[101]

बाहर दुकानों में चित्र इस प्रकार बना रखे है कि हिन्दू धर्म सबसे ऊपर बाकी सब नीचे हैं - "उसमें एक अंग्रेज, हैट हाथ में पकड़े, देवी के चरणों में फूलों का गुलदस्ता रख रहा है । झुका है और लिली जैसे कुछ फूल हैं । सामने टंगी तस्वीरों में बौद्ध और जैन भिक्षु, सिख सरदार, तमाम किस्म के लोग देवी के आगे साष्टांग प्रणाम कर रहें हैं ।"[102]

मठ हिन्दू धर्म के प्रचार के लिए भगवान का गुणगान करते हैं और औरतें बताती हैं कि यहाँ देवियों का स्थान कितना ऊँचा है - "मठवालों का कहना है कि स्वंय शंकर भगवान ने यहाँ देवी के आगे शीश झुकाया था और औरतों को याद दिलाते हैं कि देवियों हमारे धर्म में सब जानते हैं, कि तुम्हारा स्थान कितना ऊँचा है ... गर्व से कहो हम हिन्दू हैं ।"[103] लोगों को मानसिक स्तर पर महसूस करवाया जाता है कि उनका जन्म उस धरती पर हुआ है जिस धरती पर पहले भगवान का हुआ था ।

शहर पहले विश्वविद्यालयी शिक्षा के लिए प्रसिद्ध रहा, पर उस बरस हिन्दू धर्म का प्रचार-प्रसार ऐसे किया जा रहा था । जैसे मठ में देवी ने स्वंय अवतार लिया हो और लोग उस अवतार को देखने के लिए बाहर से आ रहे थे - "उसके पहले हमारा शहर यूनिवर्सिटी के कारण जाना जाता था । उस बरस ने उसे तीर्थ स्थान बना दिया । दूर-दूर से लोग बसों-गाड़ियों में लदे-फदे आते थे ।"[104]

मठ के द्वारा लोगों को आकर्षित करने और उत्साह पैदा करने के लिए तरह-तरह की अफवाहें फैलाई जाती है - "अभी तक मठ के मंदिर की धूम थी, अब एक नई उमंग जागी है । दूर-दूर से भक्त आ रहे हैं और शहर के किनारे पड़े खंडरनुमा मस्जिद जिस पर कहते हैं कि वानर सेना ने मठ का ध्वजा फहराकर मंदिर बना दिया है ।"[105]

उस बरस शहर में लाउडस्पीकरों की बिक्री बहुत हुई । हर धर्म के कार्यकर्त्ता अपने कार्य को करने के लिए इनका प्रयोग करने लगे । चाहे जुलूस निकालते समय अपना भाषण देने में या लोगों को दूसरे धर्म की कमियाँ बताने के लिए । मठ की गतिविधियों को देखते हुए अन्य धर्म के कार्यकर्त्ता भी इसी होड़ में लग जाते हैं । अपने धर्म को महान और दूसरे धर्म को नीचा दिखाने में । लोगों को अपने धर्म के प्रति, दूसरे धर्म से खतरा महसूस दिलाने और असुरक्षित भावना पैदा करने के लिए इनका प्रयोग करते हैं । इसके लिए उस बरस, लोगों में अन्ध विश्वास पैदा किया जाता है कि उनका धर्म कितना महान है जो फिर से इस पापी धरती को महान बनाने के लिए उनके देवी-देवताओं ने पुनर्जन्म लिया - "हमारे इस शहर में उन दिनों लाउडस्पीकरों से धर्म बटते थे और सुनसान रातों

में घर की चहार दीवारी पर बिलौटे रोते थे । कितनों के सिर झुक गए थे कि देश तो है यह बनाया, मगर पिशाचों का, जिन्होंने धर्म तक की धार्मिकता मिटा दी । उस बरस भगवानों की बाक़ायदा खेती हुई । बिज लगे, जिनके ऊपर अंगुल भर मूर्तियाँ रखी गईं देवी जगदम्बे की और धरती को फाड़कर पौधा और देवी प्रकट हुए तो - "जै जगदम्बे" से लाउडस्पीकर झनझनाने लगे । ऐसे की दीवारें हिल गई, गिरजों और मस्जिदों की नींवें हिल गई ।"[106]

धार्मिक हलचल के कारण शहर, सभी के आकर्षण का केंद्र बना हुआ था । दूर-दूर से लोग देवी के दर्शन के लिए आ रहे थे । इसी कारण उस बरस प्रधान मंत्री भी आते हैं । उनके आने की सूचना मिलते ही शहर की कायाकल्प करने की कोशिश की जाती है - "प्रधान मंत्री मठ के महंत से मिलेंगे । मठ के आस पास शहर के प्रशासन ने मज़दूर लगा दिए हैं । सड़क पर गरम-गरम तारकोल पड़ा है और सड़क किनारे, जिस तरफ़ गाहे-बगाहे नदी बहती है, मजदूरिनें उतर गई हैं ।"[107]

मठ की गतिविधियों के ही कारण शहर में हर जगह हिन्दू धर्म का प्रचार होने लगता है । इसी कारण एक फ्लाईओवर भी बनने वाला है । "सुना है, मठ के सामने एक आधुनिक फ्लाईओवर बनेगा, जिसका नाम होगा जगदम्बे फ्लाईओवर ।"[108]

"मठ पूजा स्थल था, मेला स्थल था, चकपक चकपक चमकता । नरगिस न भी हो, कुछ न हो, बस कर्फ्यू न, जो जब तब नहीं होता, तो लोगों की वहाँ अठखेलियाँ रहती ।"[109] शहर में मठ केवल एक पूजा स्थल न रहकर सभी को, अपनी ओर केन्द्रित करने का जरिया बन जाता है । यदि शहर में कर्फ्यू नहीं होता तो वह एक ऐसा स्थान बन जाता है । जहाँ लोग अठखेलियाँ करने आते हैं । जब कर्फ्यू लगता है तो वहाँ सब बंद हो जाता है । वहाँ कर्फ्यू लगता है, वहाँ की ही साम्प्रदायिक गतिविधियों द्वारा ।

बहुत से फिरंगी साधू मठ में आ गए हैं । नारंगी धोती के नीचे किरमिच के जूते पहने बाज़ार में नज़र आते हैं । पीठ पर रकसैक भी है । देवी की स्तुति गाते हैं और हाथ में डिब्बा है ।"[110] हिन्दुओं के साथ, विदेशी लोग भी मठ की

ओर आकर्षित होते हैं और मठ में देवी के दर्शन के लिए मठ की ओर आते हैं । अपनी भक्ति-भावना को दिखाने के लिए उन्होंने नारंगी कपडे पहने हुए है, और वे देवी के भजन गा रहें हैं ।

(घ) जीवन-मूल्य :

मानव को वस्तुतः मानवता की ओर अग्रसर करने का श्रेय उन जीवन मूल्यों को जाता है, जो अनिवार्यता उसके जीवन के हर प्रश्न से सम्बन्धित होते हैं । जीवन मूल्य समाज द्वारा स्थापित वे धारणाएँ, आदर्श दृष्टिकोण एवं मान्यताएँ हैं, जो व्यक्तिगत स्तर पर नहीं समष्टिगत स्तर पर भी प्राय: स्वीकार्य होती हैं । मानव का व्यक्तिगत जीवन, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, दार्शनिक जीवन में उसके मूल्य ही हर अवस्था में उसका मार्गदर्शन करते हैं ।

जीवन मूल्य प्राचीन काल से ही चले आ रहे हैं । समय के परिवर्तन के साथ-साथ इनमें बदलाव भी होते रहें हैं । जीवन मूल्य व्यक्ति के सर्वांगीण विकास और कल्याण में योगदान देने के साथ-साथ किसी अन्य के विकास और कल्याण में किसी भी प्रकार की बाधा पैदा नहीं करते ।

जब हमारे जीवन में अशांति, अलगाव, आन्दोलन, उपद्रव, असमानता, अराजकता, आदर्श विहीनता, अन्याय, अपमान, अत्यचार, अस्थिरता, हिंसा, संकीर्णता, कुंठित भावनाएँ पैदा होने लगती हैं, तो समाज में साम्प्रदायिकता, जातीयता, भाषावाद, क्षेत्रीयवाद आदि भावनाएँ पनपने लगती हैं । समाज में भय का माहौल पैदा हो जाता है । लेखिका गीतांजलि श्री ने 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में भी इसी प्रकार के दृश्यों को दर्शाया है - "कुछ घट गया । एक संप्रदाय के चार युवकों ने दूसरे संप्रदाय के इक्के चालक को जबरन नीचे खींचकर उसकी आँखे फोड़ दीं ।"[111] ईर्ष्या, अराजकता और हिंसा की कुंठित भावना के कारण लोग एक-दूसरे के सम्प्रदाय के खिलाफ हो जाते हैं, कुछ लोगों को अपना शिकार बनाते हैं । चाहे वे कसूरवार हों या नहीं ।

मनुष्य सबसे ज्यादा प्रभावित अपने आस-पास के वातावरण से होता है । जैसा उसका माहौल होगा वह उसी में ही ढल जाता है । प्रस्तुत उपन्यास के

कथ्य शहर में दंगे हो रहे हैं । जगह-जगह लूटपाट हो रही है । जहाँ साम्पदायिक झगड़े हो रहे हैं । लोग एक दूसरे को मार रहे हैं । उन्हें जला रहे हैं- "घाव ही घाव हैं । एक का सर फूटा है दूसरे का हाथ टूटा है, तीसरे के पेट में बरछी भोंक दी थी.....।"[112] शहर में लोग अपने आप को असुरक्षित महसूस करने लगते हैं । साथ ही अपने आप को सुरक्षित रखने के लिए अपने से कमजोर के साथ मार-पीट करने लगते हैं ।

साम्प्रदायिकता की जड़ों ने शहर के मानवीय मूल्यों, नैतिकता और शुचिता को तार-तार कर दिया है । लोग एक दूसरे के सम्प्रदाय के लोगों को मार-काट रहे हैं । उर्मिला अपने साथी प्रोफ़ेसर छोटे जोश को बताती है कि अस्पताल के मुर्दाघर से, इतनी बदबू उड़ रही थी की वहाँ खड़ा नहीं हुआ जा सकता- "इतनी लाशें हैं, जिन्हें कोई पहचान नहीं पा रहा, जिन्हें कोई ले जाने वाला है ही नहीं ।"[113]

शहर में मठ के प्रचार या विश्वविद्यालय की गतिविधियाँ या अख़बारों में छपे लेख द्वारा या फिर अपने स्वार्थ सिद्ध करने वाले लोग के भड़कायों भाषणों द्वारा एक सम्प्रदाय के लोग दूसरे सम्प्रदाय के लोग को हानि पहूँचाने की हर संभव हरकत करते हैं । उनका मकसद अपने धर्म को सही साबित करना नहीं बल्कि अपना केवल स्वार्थ सिद्ध करना है - "हमारे जैसे संभ्रांत लोग गए, बीवियों-बच्चों के साथ गए, दुकानों को जलाने से पहले उनमें से चुन-चुनकर सामान लूटा । लूटा नहीं, मेला रहा ! नाप नाप के जूते निकाले । मैच कर के ब्लाउज पीस उठाए । ... पड़ोस का बेटा मारुती लेकर आया था ।"[114] उसमें सब सामान डालने के लिए ।

लोग अपने घरों में भी सुरक्षित नहीं हैं । उपद्रवी लोग घरों में घुसकर साम्प्रदायिकता का खेल-खेल रहें हैं - "मुस्तफ़ा के घर कल दुपहर में एक टोली घुसी और उसकी बीवी और बूढी सास को कमरे में बंद करके, घड़ियाँ, जेवर, पैसा, चुराया । फिर सामान तोड़ फोड़कर भाग गये ।"[115]

शहर में मौत के भय का साया बढ़ने लगता है । हिन्दू इन दंगों से बचने के अपने घरों की बाहर की दिवारों पर बड़े-बड़े, लाल अक्षरों में लिखवा रहे हैं कि

वे हिन्दू हैं । मानवीय मूल्यों का ह्रास अपनी सीमा में लग जाता है, जब ज्यादा दिखाई देता है तब विश्वविद्यालय के कुछ उपद्रवी शिक्षार्थी अपने ही प्रोफ़ेसर के घर उसको सबक सिखाने के लिए जाते हैं । उस समय हनीफ़ घर पर नहीं होता । घर पर केवल श्रुति और ददू ही थे । हनीफ़ को गाली देकर बुलाते हैं- "कहाँ है वो हरामी पिल्ला ? ... निकालो उसे बाहर, हमारा टीचर कहलाने वाला .....उसे नंगा करके, मुँह काला करके, गधे पर उल्टा बिठाकर पूरे शहर में घूमाएँगे ।"[116] साथ में जबरदस्ती श्रुति का हाथ पकड़ कर लिफाफा थमाते हैं । बीच में ददू हस्तक्षेप करते हैं और उनको बाहर जाने के लिए कहते हैं । बदले में वे उपद्रवी शिक्षार्थी श्रुति को छोड़ ददू पर हमला बोलते हैं - "दहाड़ के साथ भीड़ उन पर टूट पड़ी है । उन्हें दबोचकर उछाला है । ददू हवा में कमान से छूटे तीर की तरह कुछ दूर तक सर्र से उड़ते चले गए हैं और ... ज़ोर का शब्द करते, धूल में जा अटे हैं ।"[117] ये उपद्रवी कोई और नहीं बल्कि विश्वविद्यालय के ही छात्र होते हैं । जो अपनी संकुचित मानसिकता से ग्रस्त होकर अपने जीवन मूल्यों को त्याग कर समाज में अराजकता फैलाते हैं ।

(ङ) नारी सशक्तिकरण :

वर्तमान समय में हमारा देश प्रगति की ओर अग्रसर हो रहा है । इस प्रगति में नारियों का भी उतना ही योगदान है, जितना पुरुषों का । नारी हर क्षेत्र में पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधे मिलाकर हर कार्य को सफल रूप से कर रही हैं । वह किसी भी रूप में पुरुष से कम नहीं हैं । ऐसी स्थिति में हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि महिलाओं में जिस सीमा तक नैतिकता का पतन हुआ है उसके प्रति उन्हें सचेत कर उनमें जीवन की गरिमा को स्थापित करने की प्रेरणा दे सकें ।

'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में श्रुति का चरित्र बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है । वह एक बुद्धिजीवी है । वह हर काम बड़ी समझदारी और संयम के साथ करती है । उसके अन्दर आत्मविश्वास की भावना है । अपनी समझदारी से ही वह साम्प्रदायिक माहौल में भी अपने पति के साथ सुखमय जीवन बिताती है । उसका जीवन मिश्रित संस्कृति का उपजीव्य है । उसके पिता पंजाबी और माता बनारसी थीं । स्वयं उसने एक मुसलमान के साथ विवाह

किया । यही कारण है कि श्रुति का जीवन भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में व्यतीत हुआ । अलग-अलग संस्कृतियों के साथ सम्पर्क होने के कारण उसके अन्दर मानवीयता के गुण प्रस्तुत उपन्यास के सभी पात्रों से ज्यादा देखने को मिलते हैं । वह एक साहसी व्यक्तित्व की महिला है । श्रुति पेशे से एक संवेदनशील लेखिका है । लेखिका होने के कारण वह अपने आस-पास हो रही साम्प्रदायिक गतिविधियों को ध्यान से देखती है । वह शरद और हनीफ़ के साथ मठ में जाती है । वहाँ की गतिविधियों को देखने के लिए । वह अच्छी तरह से जानती है कि इन साम्प्रदायिक गतिविधियों के पीछे मठ ही जिम्मेदार है । वह शरद और हनीफ़ के साथ मिलकर, खुल कर अपने सांप्रदायिक विरोधी विचारों को अखबारों में लेख के रूप में लिखती है । शहर में सांप्रदायिक दगों के बाद वह उन स्थानों का जायजा लेने के लिये शरद और हनीफ़ के साथ वहाँ जाती है । जहाँ-जहाँ दंगों का प्रभाव पड़ा और लोगों से इन दंगों के बारे में बातचीत करती है । रिपोर्ट तैयार कर के अख़बार में प्रकाशित करवाती है । उसका प्रमुख उद्देश्य लोगों को सांप्रदायिक गतिविधियाँ के प्रति सचेत करना हैं ।

श्रुति जहाँ समाज के प्रति एक सचेत जिम्मेदार लेखिका है वहीं उसके अन्दर प्यार की कोमलता भी है । वह छुप-छुप कर प्रेम कहानियाँ भी लिखती है - "जिसमें प्यार है और सुनहरी घास, जो बैठने पर नर्म लगती है, मगर उठकर चल देने पर चुभने लगती है ।"[118] श्रुति के अन्दर संवेदना की भी भावना है । शहर में साम्प्रदायिक दंगों के कारण जगह-जगह कैम्प लगाए जाते हैं । श्रुति, शरद के साथ खाना और कपडें लोगों को देकर आती है, जो कैम्पों में रहते हैं । श्रुति एक हिन्दू है और हनीफ़ एक मुसलमान होने के कारण, बहुत सी ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं । जो उनके विरुद्ध होती हैं । श्रुति हर पल हनीफ़ के साथ खड़ी रहती है । शरद कई बार हनीफ़ के खिलाफ बोलता है परन्तु श्रुति शरद का विरोध करती है । शहर का जिलाधीश श्रुति, हनीफ़ और शरद को दंगों के खिलाफ़ लेख लिखने के लिए मना करता है । श्रुति सोसायटी की औरतों के साथ मिलकर जिलाधीश के पास जाती है और उनका विरोध करती है । उनसे पूछती है - "क्यों नहीं जाएँ हम उन इलाकों में, मठ में, कैम्पों में ? क्यों नहीं बताएँ महंत क्या बोल रहे हैं, दंगे से नुकसान खाए लोगों की क्या मदद हुई है, क्या नहीं हुई है, कि वादा कुछ और, करनी कुछ और ।"[119]

लेखिका, श्रुति के माध्यम से प्रकृति-सौन्दर्य का प्रभावशाली चित्रण करती है । श्रुति और हनीफ़ ने घर के आगंन में एक मधुमालती की बेल लगा रखी है । उस पर सफ़ेद फूल खिलते हैं । श्रुति उन सुंदर फूलों की सुन्दरता को देख कर आनंद अनुभव करती है - "श्रुति देर से मधुमालती के पास खड़ी है । कभी अन्दर देखती है, कभी फूलों में नाक सटाकर ज़ोर की साँस लेती है । नहीं जी, एक बार अन्दर देखती है, एक बार फूलों में नाक सटाती है, फिर अंदर, फिर नाक सटी ! मज़ा यह की खुशबू नहीं आ रही । श्रुति नहीं मानेगी । उसे खुशबू आ रही है, मगर बार-बार नाक सटाकर साँस खिंचेगी, इस क्रिया ने कहिए तो खुशबू, कहिए तो उसका भ्रम, पैदा कर दिया है ... इतनी ज़ोर से साँस खिंच रही है, मानो खुशबू का होना उसकी नाक पर निर्भर करता है, न की फूल की अंतरात्मा पर !"[120]

प्रस्तुत उपन्यास में दूसरी महत्वपूर्ण नारी पात्र बेबरली है । वह एक विदेशी महिला पत्रकार है । वह एक सुलझी हुई महिला है । वह शरद की दोस्त है । शरद के घर उसका आना-जाना भी है । शरद जब कभी तनाव से घिरा रहता है । उस वक्त बेबरली ही उसका साथ देती है । अपने लेख के लिए, वह शहर की औरतों की घरेलू चित्रकारी इक्कठा करती है । वह शहर में हो रहे साम्प्रदायिक दंगों की रिपोर्ट अख़बारों में प्रकाशित करवाती है । दंगों की जाँच पड़ताल करने के लिए वह शरद के साथ शहर के उन सभी जगहों पर जाती है । जहाँ-जहाँ दंगे हुए हैं ।

(च) मृत्यु-बोध :

मृत्यु जीवन की लय में बसी हुई एक सहज सच्चाई है । प्राणी जन्म लेता है । अंत में उसे मरना भी होता है । हर व्यक्ति इस बात को जानकर भी अनजान बना रहता है । उससे दूर भागता है । उससे बचने की कोशिश करता है । हमारे समाज में कुछ स्वार्थी लोग केवल अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए इस बात का फायदा लेते हैं । लोगों को उनकी मृत्यु का भय दिखाकर अपना उल्लू सीधा करते हैं । उपन्यास के आरम्भ में ही लेखिका मृत्यु के भय का वर्णन करती है - "उस बरस एक बार सड़कों पर ऐसी ही नदियाँ बहने लगी थीं, ... टंकियों का पानी था ... मुहल्लों ने जहर के डर से खोलकर बहा दिया था

।"[121] शहर भर में अफवाह फ़ैल गई की पानी की सप्लाई में किसी ने जहर मिला दिया । किस संप्रदाय ने ये किया, किसी को नहीं पता । जैसे ही लोगो को पता चलता है । सब घबरा जाते हैं । शहर में अशांति और मृत्यु का भय छा जाता है । लोग जानने की कोशिश ही नहीं करते की इन बातों में कितनी सच्चाई है , कितनी नहीं । बिना सोचे समझे एक दूसरे के खिलाफ बैर की भावना पैदा कर लेते हैं ।

शहर में अराजकता फैल जाती है । काफी समय से शहर में जब कोई वारदात घटित नहीं होती तो । लोगों के दिल और दिमाग में एक डर हावी हो जाता है कि अब जरुर कोई बड़ी घटना घटने वाली है । लेखिका ने लोगो के इसी भय को दर्शाते हुए लिखा है कि - "कभी काफी दिनों तक कुछ नहीं होता । कोई ऐसी-वैसी वारदात नहीं घटती तो ... तले की साँसे तले, ऊपर की ऊपर । सन्नाटे से घबराता था शहर ।"[122]

शहर में कभी भी कहीं भी बम फटने की खबर कभी अखबारों में आती तो कभी रेडियों पर सुनाई देती है । लोग ही क्या बच्चे भी मृत्यु के भय से डरने लगते हैं । प्रस्तुत उपन्यास में एक व्यक्ति अपनी बच्ची की मानसिकता का वर्णन करता है - "मेरी बच्ची इतना डर गयी है कि घूम-घूमकर बस दरवाज़े-खिड़कियाँ बंद करती रहती है । अब तो घरों में दुबके रहो तो भी सुरक्षित नहीं ।"[123]

प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका लिखती है कि उस बरस लोगों के सर पर मौत का साया छा रहा था । हर एक संप्रदाय का व्यक्ति दूसरे संप्रदाय के लोगों से डरने लगे थे । कोई नहीं जाता था कब कौन से संप्रदाय के लोग एक दूसरे के खिलाफ भड़क जाए ? कब दंगे की आग भड़क जाए ? कब शहर में लूट-पाट हो जाए ? कब कोई उपद्रवी लोग किसी के घर में घूस उनको तहस नहस कर दे ? कोई नहीं जानता ? हिन्दू तो हिन्दू, मुस्लिम भी इस खौफ में जीने लग रहें थे । उस बरस शहर में शांति, अमन, भाई चारा सब खत्म हो गया था । ये वे ही लोग थे, जो बरसो से एक साथ रहते थे । उनके दुःख में दुःख और सुख में सुख अपने को एक दूसरे में साझा करते थे । समय बदल गया या फिर लोगों का नजरियाँ । अब ये ही लोग एक दूसरे के संप्रदाय के लोगों को संदेह की नज़र से

देखते थे - "मौत जब सर पर होती है तो कौन सोच पाता होगा कि उससे डरो ? डर गए तो मौत पहले ही न आ जाएगी ? ... जितने दंगों में मार-काट से नहीं मरे, उतने सदमे से मरे, लोगों का कहना था । ...लोग डर से गिडगिडाए कि वह आया ..आया..कटार लेकर...मुसलमान...त्रिशूल लेकर....हिन्दू..अरे-अरे, मत मारो मुझे.. मैं तो ईसाई हूँ .अरे, हम तो बोहरा हैं...बेटा, तुम्हारी माँ की तरह हूँ ...।"[124] दोनों तरफ शहर के इस पार और उस पार के लोगों के मन में मृत्यु का भय सदा छाया रहता । शहर में कोई भी ऐसी जगह सुरक्षित नहीं है जिसे कहा जाए । क्या पता कब कहाँ, बम फट जाए ?

शहर में दंगों के कारण बार-बार कर्फ्यू लगता है । श्रुति और बेबरली दोनों वहा कैंप में जाती हैं । वहां की रिपोर्ट तैयार करने, जहाँ पर दंगें हुए । दोनों मिलकर एक एलबम देखती हैं । मरे हुए, घायलों की सूची और सबूत हैं, रंगीन तस्वीरों के तौर पर देखती हैं । वहाँ पर पीड़ित औरतों से भी बातचीत करती हैं । "कैंप के बच्चे आगे-पीछे से झुककर खून और तारकोल से लिथड़ी, फूली देहों को देख रहे हैं । ... जले-कटे, अधमरे मुर्दे, वीभत्स तन-बदन । ... औरतें बता रही हैं, हाँ मुझे नंगा कर दिया .... मैं बक्से में घूस गई ... पुलिस आई, तब निकली । ... हाँ इसे दस बार ... इसकी पेशाब वाली जगह में टांके ...।"[125]

निष्कर्षत: यह उपन्यास साम्प्रदायिकता के बौद्धिक-विमर्श को केंद्र में रखकर लिखा गया है । लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास में हिन्दू-मुसलमान दंगों पर बौद्धिक विमर्श के मध्य सदियों से चले आ रहें दोनों सम्प्रदायों (हिन्दू-मुसलमान) के संबंधों को विश्लेषित किया है और भारतीय सभ्यता गंगा-जमुनी संस्कृति की हिमायत की है । लेखिका मानती है कि यदि हम दोनों (हिन्दू और मुसलमान) ईमानदारी से पारस्परिक सौहार्द्र और स्नेह का वातावरण पैदा करने का सक्रिय प्रयास करें तो कोई कारण नहीं कि इस समस्या का समाधान न हो सके । गीतांजलि श्री का यह उपन्यास साम्प्रदायिकता संबंधी उपन्यासों में अपना अलग स्थान रखता है, क्योंकि यह उपन्यास कई स्थानों पर भारतीय समाज के विभिन्न पहलुओं को सामने लाता है और बहुत से अनछुए पहलुओं पर भी सोचने के लिए पाठकों को बाध्य करता है ।

गीतांजलि श्री ने इस उपन्यास में देश के तथाकथित बुद्धिजीवियों की दोहरी मानसिकता को भी बेनकाब किया है । अगर हमारे समाज में बुद्धिजीवियों ने अपनी भूमिका का निर्वाह निष्पक्ष होकर किया होता, तो आज शैक्षिक राजनीति अपने कदम मजबूती से नहीं फैला सकती थी ।

लेखिका ने इस उपन्यास में हिन्दू-मुस्लिम दंगों के पीछे धार्मिक राजनीति को कारण बताया है, जो की मठ द्वारा की जाती है । हमेशा ही साम्प्रदायिक दंगों में धार्मिक उन्माद और धर्मान्धता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है । धर्म के नाम पर अधर्म करने के लिए धर्मभीरु जनता को गुमराह किया जाता है ।

जीवन मूल्यों में परिवर्तन का एक मुख्य कारण हमारी शिक्षा प्रणाली भी है । वर्तमान में शिक्षा प्रणाली शिक्षार्थी के बौद्धिक विकास पर अधिक बल देती है, न की नैतिकता बोध पर । नैतिक बोध की इच्छा जब शिक्षार्थी में पैदा स्वम् हो, तो उसे सही-गलत, उचित-अनुचित का भान हो जाता है । वह किसी भी प्रकार के स्वार्थी, छद्म व्यक्ति के भड़काने से समाज में उपद्रव नहीं करता । लेखिका आलोच्य उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस उपन्यास' के द्वारा यही बताने की कोशिश की है कि किस प्रकार पढ़े-लिखे व्यक्ति भी छद्म व्यक्तियों के बहकावे में आ कर, अपने ही प्राध्यापक पर उत्तेजित हो कर, उस के घर पर हमला कर देते हैं । जीवन मूल्य हमें समाज में मानवीय व्यवाहर को समझने के साथ उसका सम्मान करना भी सिखातें हैं ।

श्रुति और बेबरली उस साम्प्रदायिक के खिलाफ आवाज उठाती है । समाज के सामने साम्प्रदायिकता के कारणों को और उसके परिणामों को सामने लाने का कार्य करती हैं । वे दोनों ही समाज के प्रति संवेदनशील हैं ।

'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में लेखिका ने पाठकों को, मृत्यु के भय से अवगत करवाया है । किस प्रकार लोग सड़कों पर नहीं बल्कि अपने ही घरों में सुरक्षित नहीं हैं । हमेशा उन्हें एक-दूसरें संप्रदाय के लोगों से मृत्यु का भय बना रहता हैं ।

सन्दर्भ :

1. हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, डॉ अमरनाथ, पृ. 367

2. हिन्दू-मुस्लिम रिश्तों के बहाने : रही के उपन्यास, रमाकांत राय, पृ. 55

3. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, फैलेप से

4. वही, पृ. 17

5. वही, पृ. 7

6. वही, पृ. 7

7. वही, पृ. 19

8. वही, पृ. 26

9. वही, पृ. 25

10. वही, पृ. 30

11. वही, पृ. 56

12. वही, पृ. 73

13. वही, पृ. 99

14. वही, पृ. 110

15. वही, पृ. 111

16. वही, पृ. 111

17. वही, पृ. 117

18. वही, पृ. 127

19. वही, पृ. 130

20. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 129

21. वही, पृ. 180

22. वही, पृ. 169

23. वही, पृ. 328

24. वही, पृ. 139

25. वही, पृ. 239

26. वही, पृ. 240

27. वही, पृ. 350

28. वही, पृ. 118

29. हिंदी उपन्यास का इतिहास, गोपाल राय, पृ. 395

30. हिंदी गद्य साहित्य, रामचन्द्र तिवारी, पृ. 282

31. कथासमय सृजन और विमर्श, शशिकला राय, पृ. 114

32. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 16

33. वही, पृ. 17

34. वही, पृ. 28

35. वही, पृ. 29

36. वही, पृ. 29

37. वही, पृ. 29

38. वही, पृ. 54

39. वही, पृ. 54

40. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 64

41. वही, पृ. 99

42. वही, पृ. 46

43. वही, पृ. 62

44. वही, पृ. 65

45. वही, पृ. 87

46. वही, पृ. 90

47. वही, पृ. 100

48. वही, पृ. 116

49. वही, पृ. 116

50. वही, पृ. 116

51. वही, पृ. 136

52. वही, पृ. 156

53. वही, पृ. 156

54. वही, पृ. 157

55. वही, पृ. 157

56. वही, पृ. 156

57. वही, पृ. 156

58. वही, पृ. 158

59. वही, पृ. 159

60. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 159

61. वही, पृ. 159

62. वही, पृ. 160

63. वही, पृ. 161

64. वही, पृ. 161

65. वही, पृ. 171

66. वही, पृ. 171

67. वही, पृ. 189

68. वही, पृ. 189

69. वही, पृ. 189

70. वही, पृ. 240

71. वही, पृ. 243

72. वही, पृ. 243

73. वही, पृ. 252

74. वही, पृ. 268

75. वही, पृ. 290

76. वही, पृ. 263

77. वही, पृ. 263

78. वही, पृ. 263

79. वही, पृ. 278

80. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 279

81. वही, पृ. 295

82. वही, पृ. 307

83. वही, पृ. 307

84. वही, पृ. 342

85. वही, पृ. 342

86. वही, पृ. 343

87. वही, पृ. 349

88. वही, पृ. 17

89. वही, पृ. 10

90. वही, पृ. 10

91. वही, पृ. 19

92. वही, पृ. 16

93. वही, पृ. 22

94. वही, पृ. 22

95. वही, पृ. 38

96. वही, पृ. 44

97. वही, पृ. 45

98. वही, पृ. 47

99. वही, पृ. 55

100. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. संख्या 59

101. वही, पृ. 64

102. वही, पृ. 71

103. वही, पृ. 80

104. वही, पृ. 81

105. वही, पृ. 93

106. वही, पृ. 101

107. वही, पृ. 124

108. वही, पृ. 124

109. वही, पृ. 133

110. वही, पृ. 140

111. वही, पृ. 19

112. वही, पृ. 76

113. वही, पृ. 215

114. वही, पृ. 265

115. वही, पृ. 302

116. वही, पृ. 348

117. वही, पृ. 350

118. वही, पृ. 52

119. वही, पृ. 80

120. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 188

121. वही, पृ. 7

122. वही, पृ. 28

123. वही, पृ . 209

124. वही, पृ. 223

125. वही, पृ. 266

तृतीय अध्याय

'हमारा शहर उस बरस' का शिल्प

(क) भाषा :

"भाषा वह समर्थ साधन है, जिसके द्वारा मनुष्य बोलकर या लिखकर भावों एवं विचारों का आदान-प्रदान करता है ।"[1] कथा-साहित्य में कथाकार अपनी रचना को प्रभावशाली बनाने के लिए, भाषा के नये-नये शब्दों को खोजता है । उसका कर्तव्य बन जाता है कि प्राचीन भाषा के ढाँचे को किस प्रकार सुधारा जाए । जिससे वह भाव प्रवण शब्दों का प्रयोग करके पाठकों को चौंका दे । जिसके द्वारा वह अपनी एक खास शैली का निर्माण करके पाठकों को पढनें के लिए मजबूर कर सके । भाषा एक जीवन्त माध्यम है, जिसे आवश्यकतानुसार तोड़ा-मरोड़ा जाता है । भाषा किसी भी कृति का एक महत्वपूर्ण पक्ष होता है । इसी आधार पर एक कृति अन्य किसी भी कृति से अलग स्पष्ट होती है । वह एक ऐसी डोरी होती है, जो किसी भी कृति को एक धागे में पिरोये रखती है ।

डॉ. गोपाल राय उपन्यास की भाषा पर विचार प्रकट करते हुए कहते हैं - "औपन्यासिक संरचना को यथार्थवादी स्वर प्रदान करने में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । उपन्यास का 'गद्य' में लिखे जाने का तर्क भी यही है कि गद्य वास्तविक जिन्दगी में 'व्यवहार' की भाषा है । यद्पी 'रचना' का गद्य भी निर्मित ही होता है, पर उसमें 'यथार्थ का भ्रम' पैदा करने की क्षमता 'कविता की भाषा' या 'पद्य' की तुलना में अधिक होती है । दुनिया की सभी भाषाओं में, अपवादों को छोड़कर, उपन्यास प्राय: गद्य में ही लिखे जाते हैं ।"[2]

लेखक भाषा के माध्यम से ही अपने आप को अभिव्यक्त कर पाता है । इसके लिए वह बिम्ब, प्रतीक, संकेत आदि का सहारा लेता है । जिनके माध्यम से लेखक अपने अभीष्ट की पूर्ति करता है । लेखक के पास बहुत बार ऐसी बात होती है, जो वह सीधे-सीधे नहीं कह सकता या वह जिस गहराई तक पाठक के हृदय को छूना चाहता है । वह सपाटबयानी से नहीं कह सकता । ऐसे में वह चित्र, संकेत, प्रतीक आदि का सहारा लेता है । 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास

की भाषा उर्दू मिश्रित खड़ी बोली है । इनकी भाषा सरल, सहज और सुबोध है । वह विषयानुकूल एवं पात्रानुकूल है ।

(अ) शब्द-भण्डार :

भाषा का निर्माण शब्दों से होता है । अत: जिस उपन्यासकार का शब्द-भण्डार जितना अधिक व्यापक होगा, उसकी भाषा भी उतनी ही प्रभावशाली होगी । नि:संदेह गीतांजलि श्री का शब्द-भण्डार अत्यंत समृद्ध है । "भाषा का निर्माण विचारों का आदान-प्रदान करने के लिए हम भाषा का प्रयोग करते हैं । कोई भी भाषा वाक्यों से बनती है और वाक्य शब्दों से ।"[3] गीतांजलि श्री ने प्रस्तुत उपन्यास में तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज शब्दों का प्रयोग किया हैं ।

(i) तत्सम शब्द :

"तत्सम - तत्=उसके, सम+समान अर्थात् संस्कृत के जो शब्द बिना किसी परिवर्तन के ज्यों-के-ज्यों हिंदी में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें तत्सम शब्द कहते हैं ।"[3] रचनाकार अपनी रचना की शोभा बढ़ाने के लिए कई ऐसे शब्दों प्रयोग करते हैं । 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में तत्सम शब्द का प्रचुर प्रयोग हुआ है । यथा: "पाप का बदला पाप से ।"[4]

"साधू संतों ने समाधि छोड़ दी ।"[5]

"राणा प्रताप के वंशज ।"[6]

"हमारी संतानें जाती रही ।"[7]

"दैत्यों-पिशाचों के जुल्म बढ़े तो देवताओं को भी क्रोध आ गया ।"[8]

"भस्म का तिलक लगा ।"[9]

"शोधकर्ता नहीं कि अपनी मौलिक खोज़ का हवाला दूँ ।"[10]

"हम उस अभिशप्त तबके के जीव हैं ।"[11]

"सृजनकर्ता नहीं, न ही व्यास का गणेश की महाभारत लिखती ।"[12]

"श्रुति भी स्नेही कटाक्ष चुभोती है ।"[13]

"शाश्वत धर्म की जय, वेदों की जय ।"[14]

"वही सौम्य आकृति बैठी है, जिसके सौम्य सुर बदल गए थे ।"[15]

"सदाचारी बनो, बड़ों गुरुजनों का आदर करो, अतिथि का सत्कार करो, हमारे यहाँ अतिथि भगवान स्वरूप है ।"[16]

"अतिथियों का सम्मान पूर्वक स्वागत किया है, हमारा सिद्धांत है वसुधैव कुटुम्बकम् ..पर..नम्रता ।"[17]

"हवा में उछालकर रण क्षेत्र की-सी वाणी में अभिवादन किया ।"[18]

"समझने की सलाहियत रखने का भ्रम नहीं ।"[19]

"हम बुद्धिजीवी हैं ।"[20]

"तत्काल काम आ पाए ।"[21]

"उर्मिला स्पष्ट करती हैं ।"[22]

"वह कभी क्षमा -'झमक'-नहीं पाएगा ।"[23]

"यह तुम्हारी हर चीज उलट के करने की नीति ।"[24]

"समाज विज्ञान के क्षेत्र की सर्वोत्तम कृति घोषित किया है ।"[25]

"तुम उपनिषद् और गीता में भक्ति नहीं रखोगे ।"[26]

"देवी के चरणों में कमल करके तुम्हारे शीश डाल देंगे ।"[27]

"हमारी जाति नीच व अनुदार नहीं है । यह गौरवमय है ।"[28]

"धर्मभ्रष्टा दूत हमारी शिक्षा प्रणाली को दूषित कर रहें हैं ।"[29]

(ii) तद्भव शब्द :

"तद्भव-तत्=उसके, भव=होने वाले अर्थात् संस्कृत के जो शब्द बिगड़ कर या कुछ परिवर्तित होकर हिंदी में प्रयुक्त होता हैं उन्हें तद्भव शब्द कहते हैं ।"[30] गीतांजलि श्री के उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में तद्भव शब्दों का अभिरूप है । यथा : -

"जो हवा चल रही है, वह हवा नहीं ।"[31]

"जो कभी भी खून बनके हम पर छींटे उछाल देतीं ।"[32]

"हम सहम गए सूरज की यह गत देखकर ।"[33]

"झूमते हुए सूरज को यों कब्जे में पाकर ।"[34]

"हमारी आँखें में किचकिचा जाती"[35]

"जहाँ नर्मदिल औरतें हमजात को आग लगाकर फूँकते देखती हैं ।"[36]

"गाँव जाए ऐसा जिगर नहीं उनका ।"[37]

(iii) देशज शब्द :

देशज शब्द का सामान्य अर्थ है - देश में जन्मा । अत: ऐसे शब्द जो क्षेत्रीय प्रभाव के कारण परिस्थिति व आवश्यकतानुसार बनकर प्रचलित हो गए हैं, देशज शब्द कहलाते हैं । "हिंदी भाषा में कुछ शब्द ऐसे हैं जिनकी उत्पत्ति विभिन्न भारतीय भाषाओं या प्रादेशिक बोलियों से हुई है ।"[38] देशज शब्दों का प्रयोग इस उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में बहुत हुआ है । यथा :-

"वह कोई जुगाड़ निकालेंगे ।"[39]

"तुम भी तो एक दर्जे की पगलेट निकली ।"[40]

"गड़बड़ का तो कौनो पता नहीं लग सकता आज के जमाने में ।"[41]

"देखिए पूरब दिसा में कैसे बादल घिरे है ।"[42]

"श्रुति भी डोल रही है ।"[43]

"उन दोनों बोदे जनों को ।"[44]

"मजे से बैठना, इतना लंबा घूँघट काढ के ।"[45]

"हर तरफ से नारंगी रंग के फचक्के जो भक्तगण है ।"[46]

"मैंने कहा फ़लानी थी ।"[47]

"बच्चों को घर लिवाने-लाने के लिए ।"[48]

(iV) विदेशज शब्द :

विदेशज शब्द का सामान्य अर्थ है - वे शब्द जो विदेशी मूल के परस्पर सम्पर्क के कारण प्रचलित हुए हैं तथा अन्य देशों की भाषा से आए हैं उन शब्दों को ज्यों-का-त्यों अपना लिया गया हो । उन शब्दों को विदेशज शब्द कहते हैं - "हमारे देश में अनेक विदेशी आए । उनके संपर्क के कारण उनकी भाषाओं के भी कुछ शब्द हमारी हिंदी भाषा में प्रयुक्त होने लगे ।"[49]

अरबी, फ़ारसी के शब्द :

भारतीय समाज में हिन्दू और मुसलमानों का सदियों से बैर चला आ रहा है । भारत विभाजन और देश में आंतकवादियों के हमलों के बाद इन दोनों संप्रदायों के बीच बैर की भावना और बढ़ती ही गयी है । फिर भी भारतीय समाज में उन्हें साथ-साथ रहना ही पड़ता है । दोनों के साथ-साथ रहने के कारण दोनों भाषा के बहुत से ऐसे शब्द हिंदी भाषा में ऐसे घुल-मिल गये हैं जैसे आटे में नमक । आलोच्य उपन्यास में हनीफ़ की अहम् भूमिका है जो की एक मुसलमान है । इसी वजह से प्रस्तुत उपन्यास में अरबी, फ़ारसी भाषा के शब्दों का प्रयोग ज्यादा हुआ है । यथा:

"उफ़ कितनें ज़ोरों की हवा चल रही है ।"[50]

"घायल और मुर्दे, सब को निकाल लाएँगे ।"[51]

"ये ये ये ये अल्लाह अल्लाह,ये ये ये ये अल्लाह ।"[52]

"जाहिर है कि शराफ़त में खाना उन्हें भी पेश किया जाता ।"[53]

"बड़े मियाँ ने तपाक से एक तमाचा रसीद किया ।"[54]

"बड़े अदब से आदाबर्ज करते ।"[55]

"जहाँ बकरा हलाल हो रहा था ।"[56]

अंग्रेजी शब्द :

भारत में अंग्रेजों द्वारा दौ सौ साल शासन करने के कारण अंग्रेजी भारतीयों की अपनी भाषा के समान बन गयी है । बिना जाने हुए भी आम लोग अंग्रेजी भाषा को अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी में प्रयोग करते हैं । इस भाषा में कुछ शब्द तो ऐसे हैं कि उनकी जगह पर अनूदित शब्द रखे ही नहीं जा सकते । प्रस्तुत उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में लेखिका ने अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग अधिक किया है । जैसे-

"तुम्हारा दोस्त नाहक फ़ियर-साइकोसिस फैलाता है ।"[57]

"वायलेन्टली झुलने की आदत पड़ गई है ।"[58]

"दद्दू के आदमकद डायनिंग टेबल पर ।"[59]

"यहाँ बनेगा स्काई स्क्रेपर ।"[60]

"गुड मॉर्निंग सर...सर...।"[61]

"डिपार्टमेंट का शोर हनीफ़ के ऑफिस में आ रहा है ।"[62]

"नो टॉकिंग टॉकिंग ।"[63]

"दद्दू का, उन्हीं की तरह एन्शेन्ट रेडियोग्राम चल रहा है ।"[64]

"वी इंटलेक्चुअल्स ... वी इंटलेक्चुअल्स मस्ट एंड विल डू समथिंग ।"[65]

"वे लेफ़्ट राइट, लेफ़्ट राइट, ।"[66]

"स्टाइल मारने की या शब्दों को सजाने की जरूरत नहीं है ।"[67]

"आपका बर्ड-वाचिंग का आइडिया हमें पसंद आ गया ।"[68]

"ताकि रॉयट-मैनेजमेंट में मदद मिले ।"[69]

(v) ध्वन्यात्मक शब्द :

जिन शब्दों के द्वारा ध्वनि का आभास होता है । वे ध्वन्यात्मक शब्द कहलाते हैं । लेखिका ने आलोच्य उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' को सजीव बनाने के लिए ऐसे बहुत से शब्दों का प्रयोग किया है । जैसे ;

"घिस-घिस' श्रुति के अन्दर चलती थी ।"[70]

"ट्रिं ट्रिं । ट्रिं ट्रिं । ट्रिं ट्रिं ।"[71]

"नीम की डालों पर चिड़ियाँ चहचहा रही हैं ।"[72]

"ऐसे ज़ोर से भड़ाम से ?"[73]

"कंपकंपी के बाद साँस में सांस का आना ।"[74]

"ठुँकठुँकते निकाल गए थे ।"[75]

"गंदी चीख-चिल्लाहट सबको ... बड़बड़ाने ।"[76]

(vi) यौगिक शब्द :

जो शब्द दो या दो से अधिक शब्दों या शब्दांशों के मेल से बनता है । उस शब्द को यौगिक शब्द कहते हैं । लेखिका ने आलोच्य उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में इन शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया है । जैसे -

"सो, बौराई, बौखलाई एक से दूसरे, फिर तीसरे, फिर पहले को तकती रहती ।"[77]

"हनीफ़ रोज़ वहाँ किसानी दिखा रहा है ।"[78]

"एक दिन कुदाल चलाई तो बड़े-बड़े पत्थर निकले ।"[79]

"सच हम चुहिया है ।"[80]

"हनीफ़ 'तुम' के भारीपन पर तमतमाया-सा हो गया है ।"[81]

"तो उनके अन्दर की भावनाएँ, उनके विश्वास, सब बनावटी हैं ।"[82]

"वे निर्विकार भाव से खड़े हैं ।"[83]

(vii) रूढ़ शब्द :

जिन शब्दों के सार्थक टुकड़े नहीं किये जा सकते । उन शब्दों को रूढ़ शब्द कहते हैं । इन शब्दों का प्रयोग गीतांजलि श्री ने प्रस्तुत उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में प्रचुरता से किया है । जैसे -

"इस वक्त चुप नहीं रहा जा सकता ।"[84]

"हवा चल रही है, वह हवा नहीं, बवंडर है ।"[85]

"पटरे पर बैठी है ।"[86]

"उन्हें देखकर चाय बनवाई है ।"[87]

"अब के, चल निकलेगा ।"[88]

"किसी को पता नहीं ।"[89]

"उफ़ स्याही सूख रही है ।"[90]

"पर एक मिनट आप लोग चुप हो जाएँ ।"[91]

(viii) संकर शब्द :

संचार एवं आवागमन के विकास के कारण विभिन्न भाषाएँ परस्पर पास आने से नये शब्दों का निर्माण हो रहा है । जैसे -

"इस इलाके में जूतों के कारखाने थे ।"[92]

"मठधारियों के नारंगी लिबास पर देवी के काले लहराते बालों, सिंदूरी साड़ी और गेरुए सिंहवाला ब्रूच है ।"[93]

"देवी शक्ति दो कि सदयता के अपने स्वभाववश कहीं, मातृभूमि का अनादर न सहन कर जाएँ ।"[94]

"यह जनवाद और साम्प्रदायिक फ़ासीवाद की लड़ाई छिड़ी है ।"[95]

"खँडहर होती मस्जिद की गुम्बद पर मठ की गेरुआ पताका फहरा रही है ।"[96]

"और क्यों आए ? बलिदान देने के लिए ।"[97]

(आ) वाक्य-विश्लेषण :

एक विचार को पूर्णता से प्रकट करने वाले शब्द समूह को वाक्य कहते हैं । उपन्यास में वाक्य-रचना की स्थिति को देखना ही वाक्य-विश्लेषण का कार्य है । गीतांजलि श्री ने प्रस्तुत उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में सरल वाक्यों के साथ मिश्र वाक्य और संयुक्त वाक्यों के भी प्रयोग किये हैं । उपन्यास में पात्र का चरित्र-चित्रण करते समय लेखिका ने वाक्य ऐसे बनाएँ है, जिसे पात्रों की एक-एक भंगिमा की तस्वीर हो । कई जगह लेखिका ने परिष्कृत, सादगी से भरे हुए, भावों का वहन करने की क्षमता रखने वाले वाक्यों का भी प्रयोग किया है ।

प्रस्तुत उपन्यास में, लेखिका ने ऐसे वाक्यों का प्रयोग किया है कि सारा दृश्य पाठकों की आँखों के सामने स्पष्ट हो जाता है - "बारिश हो रही है । ट्रेन से उतरकर श्रुति प्लेटफ़ॉर्म पर खड़ी है । एक थरथराहट भरी बैचनी उसके पैरों के नीचे से गुजरकर ट्रेन के साथ-साथ निकल जाती है । लोग गिरते-पड़ते, भीगते बाहर को सवारियाँ ढूँढने दौड़ गये हैं । शहर के गाय और कुत्ते पानी टपकाते प्लेटफ़ॉर्म पर सुस्ताने चले आए हैं । पानी पटरियों की तरफ़ रुख करके बह रहा है । विराना है ।"[98]

जब शहर में एक अफ़वाह उड़ती है कि पानी की सप्लाई में किसी ने पिलिया रोग के संक्रमण का जहर मिला दिया है । लोगों ने डर के कारण घरों में पानी की टंकियों के नल खुले छोड़ दिए । जिस कारण शहर की सड़के नदियाँ में बदल गई थीं - "उस बरस एक बार सड़कों पर ऐसी ही नदियाँ बहने लगी थीं, पर वह बारिश नहीं थी, टंकियों का पानी था, जो मुहल्लों ने जहर के डर से खोल कर बहा दिया था ।"[99]

गीतांजलि श्री ने उपन्यास में छोटे-छोटे वाक्यों के द्वारा पाठकों में एक ऐसी शक्ति का सृजन किया है जिसे की उनके चिंतन को उचित धार मिल सकें - "देवीमठ तभी से याद है, जबकि वह पहले भी था । उस बरस की तरह ।

आदिकाल से यूनिवर्सिटी से सटा । शांत पड़ा था या किसी ने ध्यान नहीं दिया । अपनी योग तपस्या में लीन झाड़ियों के पीछे ।"[100]

जब हनीफ़ विद्यार्थियों को हिन्दू और मुस्लिम दोनों की मिली जुली संस्कृति के बारे में बताता है - "मुगलों के रिकार्ड मत देखों, अकबर जैसों को दरकिनार करो, छोटे-छोटे शहरों के लोकल रिकार्ड देखो । वहाँ भी यही सारी मिसालें मिलेंगी, जो साथ और सद्भावना जत लाती हैं । और वहाँ से पनपी है वह मिली-जुली संस्कृति, हमारी तहजीब, जो हर मैदान में है - संगीत, साहित्य, आर्किटेक्चर, फ़लसफा, नाच, खान-पान, पहनावा, कहाँ नहीं ।"[101]

आलोच्य उपन्यास के वाक्यों में प्रश्नों और जवाबों का सिलसिला भी चलता है । 'मठ' कैसेट के माध्यम से हिन्दू और मुस्लिम दोनों के बीच नफ़रत को और बढ़ाने का काम करता है । कैसेट के माध्यम से 'मठ' मुसलमानों से प्रश्न करता है साथ ही उसका जवाब स्वयं ही देता है । जैसे - "तुम्हें हमने बराबरी दी, तुमने हमें क्या दिया ? पाकिस्तान । बहुत हो गई दया-धर्म की बातें । अब हैं वीरता और क्रूरता के दिन । यहाँ रहना था तो रहीम रसखान बनते, प्यार से दूध में चीनी की तरह, पर नींबू बनोगे तो क्या होगा ? दूध फटेगा और दूध तो पनीर बनेगा, उसकी कीमत बढ़ेगी, पर नींबू तो कट के, निचुड़ के सूख के कूड़े में ही फिंकेगा ....।"[102] रामायण जैसी प्रसिद्ध घटना का भी उदारहण देकर हिन्दुओं को मुसलमानों के ख़िलाफ़ उकसाता हैं । "नौ सौ हज़ार बरस पहले एक राक्षस था - रावण । उसने हमारी पूज्य सीता मइया का अपहरण किया । हम आज भी - 'झमक'- भूले नहीं हैं । हर बरस रावण को जलाते हैं । ...अब तुम्हें सबक सिखलाना पड़ेगा । ... दे तो दिया तुम्हें पाकिस्तान, क्यों बैठे हो यहाँ, दूसरा पाकिस्तान बनाने ।"[103] गीतांजलि श्री ने आलोच्य उपन्यास में संदेहवाचक वाक्यों का प्रयोग भी प्रचुरता से किया है । जैसे -

"जो हवा चल रही है, वह हवा नहीं, बवंडर है, जो हमें कहीं उखाड़ न दे ।"[104]

"उन्हीं का डर था, जो मुझमें भी भर गया था ।"[105]

"बस टुकड़े ही थे, जिनका वक्त न मैं आंक सकती थी, न मुझे आंकना ही था ।"[106]

“और क्या मालूम नासमझ की अनर्गल वाणी में सार हो .. और क्या पता उस बरस के बाद बरस और भी हों ।”[107]

“पुल क्रॉस करिए और पागल लोग मिलेंगे ।”[108]

गीतांजलि श्री ने आलोच्य उपन्यास में मनोभाव प्रकट करने वाले वाक्यों का भी प्रयोग किया है । जैसे :

“अह ! बंद करो ।”[109]

“अइ !” चीख मारकर श्रुति पीछे हो गई है ।”[110]

“धप्प ! यह मेरा लँगोटिया है ।”[111]

“अजूबी किस्म की लूट, मारकाट, बलात्कार की खबर सुनकर ओफ्फो, च् च् च् च् ss जैसी प्रतिक्रियाएँ भी बेमाने ।”[112]

“अय हय ! ददू कह रहे हैं ।”[113]

(इ) मुहावरे :

जब कोई वाक्यांश अपने सामान्य अर्थ को छोड़ कर विशेष अर्थ में रूढ़ हो जाता है, तो वह वाक्य मुहावरा कहलाता है । मुहावरे का शाब्दिक अर्थ है ‘अभ्यास’ । मुहावरा वह वाक्यांश है, जो अपने शाब्दिक अर्थ से भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होकर उसी अर्थ में रूढ़ हो जाता है । लेखिका ने आलोच्य उपन्यास में मुहावरों का कुशल प्रयोग किया हैं । जैसे-

1. **“**श्रुति आग बबूला हो रही थी ।”[114]

2. “इन लोगों ने नाक में दम कर डाला ।”[115]

3. “बेचारे का दम घुट जायेगा ।”[116]

4. “हनीफ़ ने ताना कसा ।”[117]

5. “हनीफ़ उसे ही आँख दिखा जाता ।”[118]

6. “हनीफ़ थोडा हक्का-बक्का हो गया है ।”[119]

7. "उर्मिला भी लड़ाई के तेवर दिखाती है ।"[120]

8. "एशिया में सिक्का जमाया ।"[121]

9. "तुम उन्हें बलि का बकरा बना रही हो ।"[122]

10. "शरद ताव दिखाता है ।"[123]

11. "साँप सूंघ जाता है ।"[124]

12. "हम आज तक वही ढोल पीट रहें है ।"[125]

13. "श्रुति तानेबाजी कर रही है ।"[126]

14. "खटाई में डाल रखा है ।"[127]

15. "कूपमण्डूक ! टेरने दो अंदर ही खुशी से ।"[128]

(ई) **लोकोक्तियाँ :**

स्थानीय स्तर पर बोले जाने वाले वाक्यांश जिनका विशेष अर्थ निकल कर सामने आता है । "लोक गीत, लोक कथा एवं लोक नाट्य में जहाँ विस्तार की भावना है, वहाँ लोकोक्तियों में संकोच की । विलक्षणता यही है कि इनके शब्दसंकोच में अपरिमित अर्थ विस्तार है ...इनकी रचना समास शैली में होती है इनमें किसी प्रकार की इतिवृत्तात्मकता नहीं होती, अपितु गागर में सागर भरने की संश्लिष्ट भावना विद्यमान रहती है ।"[129] आलोच्य उपन्यास में लेखिका ने लोकोक्तियों का सफल प्रयोग किया है । यथा:

1. "थोथा चना बाजे घना । हाँ-हाँ जाओ ।"[130]

2. "दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की कर रहें हैं ।"[131]

3. "मकबूल हक़ का फ़ोन है : हम ईंट का जवाब पत्थर से देंगे ।"[132]

4. "लड़ते तो गीदड़-भभकी लगती ।"[133]

5. "भई जियो और जीने दो का फ़लसफ़ा चले ।"[134]

6. "नंदन का गुस्सा नौ-दौ-ग्यारह हो जाता है ।"[135]

7. "अक्ल घास चरने गई है क्या ।"[136]

8. "अब पछताय होत क्या, जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत ।"[137]

(उ) **प्रतीक :**

आलोच्य उपन्यास 'मठ' अशांति का प्रतीक है - "पता नहीं, कहाँ से पत्थर आया या गेंद थी, जो खेलते-खेलते बच्चों ने झाड़ी पर दे मारी ? पर मठ छिड़ गया और कँटीली झाड़ी में छिपा मधुमक्खी का छत्ता छिड़ गया । सुना, भन-भन करती गुस्से से पागल मधुक्खियों ने न जाने कितनों के चेहरे चूस डाले और उनके चेहरों पर लोथ के टुकड़े लटक आए ।"[138] लेखिका विश्वविद्यालय के पास बने 'मठ' को मधुमक्खी का छत्ता कहती है । जैसे मधुमक्खी के छते में कोई पत्थर लगने से ही छत्ता छिड़ जाता है और मधुक्खियाँ टूट पड़ती है वैसे ही मठ पर चोट लगने की देरी होती है कि मठ के सारे संत, साधू अपना आपा खौ बैठते हैं । शहर का वातावरण यकायक ख़राब हो जाता है । जुलूस निकालते हैं । धर्म के नाम पर आम लोगों की हत्या की जाती है । उन्हें एक दूसरे के खिलाफ भड़काते हैं ।

(ऊ) बिम्ब :

आलोच्य उपन्यास में लेखिका कुछ ही शब्दों के सहारे पाठकों के सम्मुख किसी भी घटना की बिम्बात्मक तस्वीर प्रस्तुत करती है । उपन्यास में शहर के उस पार आए दिन साम्प्रदायिक दंगों, हत्याओं, लूटपाट, आदि के बारे में ख़बरें अख़बारों, रेडियों और टेलीविजन पर आती रहती हैं । इस विषय पर हनीफ़ और श्रुति की बातचीत से पता चलता है कि उस पार के हालात किस कदर ख़राब है । "आग तो लगी ही है ।" "पर यहाँ नहीं, वहाँ ।"[139]

(ख) शैली :

अभिव्यक्ति के ढंग को शैली कहते है । उपन्यास में शैली का वही स्थान है, जो मनुष्य में उसकी आकृति और वेश-भूषा का । गीतांजलि श्री ने आलोच्य

उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में अनेक शैलियों का प्रयोग किया है - वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, पत्रात्मक, संवादात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, आत्मकथात्मक, व्यंग्यात्मक, चित्रात्मक, संकेतात्मक, पूर्वदीप्ति, काव्यात्मक एवं विचारात्मक आदि ।

(अ) वर्णनात्मक शैली :

उपन्यास में वास्तविकता और विश्वसनीयता लाने तथा चरित्र के विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट करने के लिए वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया जाता है । यह प्रस्तुतिकरण की प्रारंभिक शैली है । यह शैली किस्सागोंई उपन्यासकार के लिए बहुत उपयुक्त है । इस शैली में किसी भी वर्णन को दोहराकर उसके प्रभाव को अधिक तीव्र करना होता है ।

प्रस्तुत उपन्यास में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग अनेक स्थलों पर हुआ है । मठ की गतिविधियाँ का आँखों देखा वर्णन दृष्टव्य है -"निकल पड़े जत्थे के जत्थे हमारा शहर में मस्जिदों की नींव उखाड़ के अपने देवियों-देवताओं की लाशें खड़ी करने । हमारे शहर की हवा सनसनाने लगी । उनकी मजबूरी से बूम-बूम गूँजने लगी । जत्थे ज़ोर-शोर से निकले, भभूत के बादल उड़ाते, जो कभी भी धूल बनके हमारी आँखों में किचकिचा जाती, गंगाजल की नहरें बहते, जो कभी भी खून बन के हम पर छींटे उछाल देतीं । ...हाथों में धारदार धातु उछालकर सूरज की चिन्दियाँ कर डाली गईं और उन्ही चमकते टुकड़ों को नोक पर लहराते हुए लोग गलियों में घूस गए ।"[140]

विश्वविद्यालय का वर्णन आलोकनीय है - "स्टाफ-रूम भी ख़ाली-ख़ाली, मगर डिपार्टमेंट के विभागाध्यक्ष साहब गर्मी में हैं और जो हैं, उन्हें ही भाषण दे रहे हैं । बोलते वक्त उनकी आदत है कि अपनी मूँछ से बाल का कोना दाँतों में खींचकर 'कट' डालते हैं । एक पैर ऊपर कुर्सी पर है मय सैंडल के, वज़न घुटने पर और चाय की प्याली हाथ में ।"[141]

गीतांजलि श्री ने प्राकृतिक परिवेश का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है - "देखो हनीफ़, वह पीली चिड़िया, श्रुति नीम पर बिदा पीलक दिखाती है, एकदम कॉमन चिड़िया है, पता, लेकिन लगता है, क्या अनोखी किस्म है ? रोज़ आता

है, पर लग रहा है न की आज ही कहीं से उड़ आया है? इसे कहते हैं गोल्डन ओरियोल । पीले पंखों और कजरारी आँखोंवाले।"[142]

एक सुन्दर वर्णन प्रस्तुत है - "मठ के कोने-कोने से गुंज लौटती है- जै जगदम्बे !....महंत चरण आगे बढ़ाते हैं, नये भक्तों को पास आते देखकर । ले, छू ले बच्चा । बगल के ढेर से फल उठाकर भीड़ की ओर लपका देते हैं ।"[143]

(आ) विश्लेषणात्मक शैली :

इस शैली में कथा की सूक्ष्मता होती है । अनेक स्तर पर विश्लेषण प्रस्तुत कर उसके हर पक्ष को देखा जाता है । इस प्रकार के उपन्यासों में अधिकांश पात्र पढ़े-लिखे होते हैं । कभी-कभी कथा में विचारों का खोखलापन सिद्ध करने के लिए दुर्बल पात्रों को भी शामिल किया जाता हैं । कथा में पात्रों का आत्म विश्लेषण करने के लिए यह शैली ज्यादा प्रयोग की जाती है ।

कक्षा में सम्प्रदाय को लेकर, हनीफ़ और छात्राओं के बीच बहस चल रही है । हनीफ़ गलतफहमी को दूर करने की कोशिश करता है - "तुम तो इतिहास के छात्र हो, ...मुगलों के रिकार्ड मत देखो, अकबर जैसे को दरकिनार करो, छोटे-छोटे शहरों के लोकल रिकार्ड देखो । वहाँ भी यही सारी मिशाले मिलेंगी, जो साथ और सद्भावना जतलाती हैं और कहाँ से पनपी है वह मिली-जुली संस्कृति, हमारी तहज़ीब, जो हर मैदान में है - संगीत, साहित्य, आर्किटेक्चर, फ़लसफ़ा, नाच, खान-पान, पहनावा, कहाँ नहीं ?....वह है हमारा माज़ी, जिसमें हम ज्यादा जुड़े हैं ?"[144]

हनीफ़ और श्रुति दोनों ही साम्प्रदायिक संस्थाओं के बारे में विश्लेषण करते हैं - "भरी-पूरी इंडस्ट्री चल रही है ।....एक दम से तो यह इंडस्ट्री नहीं बन गई । हम कहाँ थे, जब यह बन रही थी ? हनीफ़ पूछता है ।"[145]

मुस्लिम धर्म के विरुद्ध, कैसेट सुनकर आपस में मुसलमानों की प्रतिक्रिया का विश्लेषण किया गया है - "मगर उससे क्या होता है ? सब जबरदस्ती की बात है कि पाकिस्तान अपना है । वहाँ भी हमारे लिए जगह नहीं, सिर्फ़ नारे हैं । कैसेट सुननेवाले को मालूम था कि जगह उनकी यही थी ।"[146]

(इ) पत्रात्मक शैली :

इस शैली में पत्र के द्वारा ही एक व्यक्ति-दूसरे व्यक्ति के सुख-दुःख, दर्द, पीड़ा, वेदना या ह्रदय की बात जान सकता है । जो बात वह आमने-सामने कहने से संकोच करता है । आलोच्य उपन्यास में साम्प्रदायिक और अंधविश्वास की बातों को बढ़ावा देने के लिए इस शैली का प्रयोग किया गया है । यथा:

"आदाब अर्ज़ ।

सबसे ख़तरनाक है मुशरिक यानी नास्तिक और मुनाफ़िक यानी पाखंडी । ये लोग मुसलमान के पास भी जाते हैं, काफ़िरों के पास भी जाते हैं और ऐसी बातें करते हैं की दंगा-फ़साद हो ।

पाखंडी, धर्मनिरपेक्ष, सेकुलर, मानवतावादी, आत्मघाती - चाहे हिन्दू हों या मुसलमान, सबसे ज़लील लोग हैं । वे शैतान की औलाद हैं ।

उन्हें जहाँ पाओ, कत्ल कर दो । उन्हें अपना दोस्त या मददगार मत समझो ।.

हिन्दुओं को भी बरगलाते हैं....।"[147]

(ई) संवादात्मक शैली :

संवाद शैली, कथा साहित्य का प्राण है । कथा-साहित्य में पात्रों का आपस में वार्तालाप करना ही संवाद कहलाता है । इसी के द्वारा कथा में सभी पात्र जीवित रहते हैं । पाठक जिज्ञासा पूर्ण कथा से जुड़ा रहता है ।

उपन्यास में लेखिका ने अनेक स्थलों पर इस शैली का ऐसा प्रयोग किया है मानो नाटक देख रहे हैं । यथा - "क्या हुआ ?" एक आदमी पूछता है ।

"बस रुक गई ।"

"रुक गई ऐ?"

"क्यों ड्राइवर साहब, क्या हुआ ?" वही आदमी पूछता है ।

"बस रुक गई," ड्राइवर आराम से बैठा जवाब देता है ।

"ऐ, रुक गई ?"[148]

हनीफ़ की किताब को पुरस्कार मिलने वाला है । इस विषय पर विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राएँ हनीफ़ को मुबारकबाद देने आए हैं ।

"सर मुबारकबाद देने आए हैं ।" पूरा मजमा हनीफ़ को घेरकर खड़ा है ।

"इस किताब को तो सर, अभी और बड़ा पुरस्कार मिलेगा ।"

"तुम लोग सर कहना बंद नहीं करोगे तो नहीं ही करोगे, क्यों ?" हनीफ़ फटकारता है ।

"सॉरी हनीफ़, प्रोफ़ेसर हनीफ़ ।" छात्र हँसते हैं,

"अब आपको ट्रिट देना है ।"

"लो, अभी लो ।" हनीफ़ अपनी मेज़ पर रखे दो सेब उठाता है और ठहाका लगाता है, "लेकिन काटा कैसे जाएगा ?"[149]

(ङ) मनोविश्लेषणात्मक शैली :

सिगमंड फ्रायड के सिद्धांतों पर आधारित ही इस शैली का निर्माण किया गया है । चिकित्साशास्त्रीय क्षेत्र में सिगमंड फ्रायड ने क्रांतिकारी वैचारिक सूत्रों की उद्भावना की, जो आगे चलकर मानव मन के विश्लेषण के आधारभूत सिद्धांतों के प्रस्तावक थे । कथानक का सूत्र पात्रों की विविध मन:स्थितियों पर आधारित होता है ।

आलोच्य उपन्यास के आरम्भ में श्रुति बीते कुछ समय के बाद उसी शहर में वापस लौटती है । उसको लेने के लिए शरद रेलवे स्टेशन जाता है । वह वहीं घटनाएँ सोचती रहती है, जो बीते दिनों घटित हुईं थी । शरद, श्रुति को लेकर घर आता है । दोनों एक दीवान के सामने शांत बैठे हुए थे । यह वही दीवान है जिस पर दद्दू बैठा करते थे - "दोनों चुपचाप बैठे हैं । उनके सामने पड़ा है उस बरस का वह शीशम का दीवान ।"[150] उक्त वाक्य शरद और श्रुति की मनोदशा को प्रकट करता है । दोनों के सामने वही शीशम का दीवान है, जो कभी दद्दू

की हँसी के साथ मिलकर हवा में बातें किया करता था । लेकिन आज वह शांत है । दद्दू के बिना ।

(ऊ) आत्मकथात्मक शैली :

इस शैली के द्वारा व्यक्ति के आन्तरिक मन को खोला जाता है । इसमें व्यक्ति अपने जीवन का वर्णन खुद करता है । वह जैसा है, वैसे ही कहेगा । इससे वह अपने भीतरी अनुभवों को बताता है । इस में व्यक्ति पाठक को अपने विश्वास में लेकर मन की परतें खोलता है ।

लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास में दद्दू के द्वारा इस शैली का प्रयोग किया है । घर में दद्दू हैं जो इस दौर से आक्रांत हैं । घर से बाहर वह कदम भी नहीं रखते है । वे घर में बैठे-बैठे ही अपने गाँव की स्मृतियों को सहेजकर रखते हैं । श्रुति, दद्दू से मुसलमानों के बारे में पूछती है तब दद्दू अपने समय के हिन्दू और मुस्लिम धर्म के बारे में बताते है - "हमारे गाँव में ही थे, बहुत से मुसलमान परिवार । चलो, आज तुम्हें एक बात बताता हूँ । ... जलसों-त्योहारों का साथ होता और तमाम अनुष्ठानों में दोनों का मिलकर उठना-बैठना मगर नाश्ता-पानी अलग-अलग कराया जाता । पूरे गाँव की बात कर रहा हूँ । मैं तो जल्दी ही इस अलग-अलग के हिसाब से अलग हो गया, मगर तब तक मुसलमान के घर जाता हिन्दू लड़का हिन्दू हलवाई की दुकान से मेरे और मेरे पिता के लिए पत्तल के दोने में खाने को लाता । हमारे घर में तमाम चीनी के बर्तन थे, जो मुसलमान मेहमानों के लिए ही रखे हुए थे ! और इन बातों का हममें से कोई बुरा नहीं मानता था । तुम भेदभाव नहीं करते, हम करते थे , मगर हम हिन्दू-मुसलमान में कहीं ज्यादा अपनापा था ।"[151]

उपरोक्त उदाहण से स्पष्ट है कि दद्दू जिस परिवेश में रहे, वहाँ साम्प्रदायिकता जैसी किसी चीज के लिए स्थान न था । उनके इसी परिवेश से दद्दू में मानवीयता के गुण आते हैं ।

(ऋ) व्यंग्यात्मक शैली :

इस शैली के द्वारा कथाकार अपनी बात को और भी धारदार बनाकर कहता है । जिसकी मार सीधी पाठक के हृदय पर लगती हैं । सीधी कहीं हुई बात अपनी अर्थवत्ता खो देती है, व्यंग्य के माध्यम से कहने पर वही बात और भी अधिक निखर कर सामने आती है । कथाकार शब्दों के माध्यम से अपनी बातों को प्रभावशाली पूर्ण ढंग से अभिव्यक्त करता है । उसके लिए उसे सावधानी पूर्वक शब्दों और वाक्यों का चयन व प्रयोग करना पड़ता हैं । व्यंग्य एक ऐसी लेखन शैली है । जिसके माध्यम से कथाकार अपने अभिष्ट की पूर्ति करता है । पाठक पर व्यंग्य का असर लम्बे समय तक रहता है । जिस व्यक्ति पर व्यंग्य कसा जाता है । वह भी इसे भली भांति समझ जाता है । लेकिन वह इसके प्रति कोई प्रतिक्रिया नहीं कर पाता । व्यंग्य को हास्यात्मक ढंग से भी कहा जा सकता है । परोक्ष रूप से भी । आलोच्य उपन्यास में भी लेखिका ने कई स्थलों पर व्यंग्य शैली का सफल प्रयोग किया है । जैसे -

"हैं SS! दद्दू अचरज का अभिनय करते हैं, गोश्त नहीं खाएगी ? पुश्तैनी मांस-खोर की बीवी पंडिताइन बनी फिरेगी! ?" बंदूक से दागी गोली-सी हँसी निकलती है ।"[152]

"लिखो-लिखो," दद्दू की आँखे चमक रही हैं, "जवान हो, कुछ तो करते ही रहोगे । नादानो ! सूरज कभी कब्ज़े में नहीं आने वाला ।"[153]

(ए) चित्रात्मक शैली :

कथा-साहित्य में किसी घटना का दृश्य के रूप में उभरना अत्यंत आवश्यक है । उसके लिये महत्वपूर्ण है कि जिस भी घटना का वर्णन, कथाकार करने जा रहा है, वह पाठक को सजीव लगे । यह महत्वपूर्ण नहीं है कि वह घटना घटित हो । वर्णन किसी भी वस्तु का हो सकता है । आलोच्य उपन्यास में चित्रात्मक शैली का प्रयोग बहुत हुआ है शरणार्थी औरतों का चित्र प्रस्तुत करते हुए लेखिका लिखती हैं - "बीच में बड़ा-लहसुन का पहाड़ । अनगिनत उँगलियाँ उस पर नाचती । लंबी जननी पोशाकों में से निकली । लहसुन की घुंघुर लवंगे, उँगलियों की घूमती फुर्ती, छिली लवंगों की छोटी-छोटी ढेरियाँ और

हवा में और फर्श पर बिखरते छिलकों के फाहे । यह शरणार्थी औरतों का झुंड है । लहसुन की तेज़ बास शरद की नाक को छिलती हुई उसके सिर में घूम जाती है । "जैसे एक कौम की महक हो ।"[154]

(ऐ) संकेतात्मक शैली :

लेखिका, शहर की अशांत स्थिति के बारे में बताती है कि शहर का तनाव बढ़ गया है उस पर काबू पाने के लिए अब शहर में बी.एस.एफ. को तैनात कर दिया गया है । "शहर में सी.आर.पी.एफ. को हटा कर बी.एस.एफ. को लगा दिया गया है ।"[155]

(ओ) पूर्वदीप्ति शैली :

पात्र की स्मृति की कुछ घटनाओं को दिखाकर उसकी याद को ताजा करने के लिए कथा में इस शैली का प्रयोग किया जाता है । कथाकार इस शैली के माध्यम से, वर्तमान में चलती हुई कथा को झट से अतीत की ओर मोड़ देता है । जिससे पाठक कथा की ओर आकर्षित होता है । आलोच्य उपन्यास में लेखिका ने अनेक स्थलों पर पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया है । श्रुति और दद्दू के द्वारा पूर्वदीप्ति शैली का उदारहण दृष्टय है - "वहाँ एक मधुमालती की लता हुआ करती थी, जिसके नीचे गुलाबी मसूढ़ों पर सफ़ेद दाँतों की कतार देखकर अजीब मतली-सी आई थी और मेरी कलम मेरे हाथ से छूटकर उसी के पास जा छिटकी थी ।"[156] श्रुति कुछ समय के बाद उसी शहर में वापिस लौट कर आती है । घर के अन्दर सामने वह उस स्थान को देखती है जहाँ पर कभी मधुमालती की बेल हुआ करती थी । जब दद्दू को कुछ उपद्रवी चोट पहुँचाने के लिए उछालते हैं तो वे उसी बेल के पास गिरते हैं । उसी कारण, उनके गुलाबी मसूढ़ों की कतार वहाँ गिर जाती है । उसी को देखकर मतली-सी आई ।

दद्दू, श्रुति को हिन्दू और मुसलमान के बीच के सम्बन्ध को बताने के लिए कुछ बीते वर्षों के कागज संभाल कर रखे हुए थे उनको निकालते है - "अब देखो तुम्हें दिखाता हूँ ।" अलमारी से कुछ कागज़, लंबा हाथ अन्दर डालकर टटोलकर निकालते हैं ।"... हमारे गाँव में, उस ज़माने में, ये पत्तियाँ बँटती थीं । यह बकरीद 1917 की है ।" ... "रामजी हिन्दू को लाजिम है । आगे आप लोग

को विदित है कि हिन्दू और मुसलमान से बैर है क़ुरबानी के वास्ते । सो, आप लोग खूब जानते हैं कि हिन्दू को बाँधकर दरख्त टांग दिया है और कुरबानी गाँव में घूमाकर कुरबानी कर दिया । इससे हिन्दू को बड़ा भारी लजाया है के जीना धिक्कार है । इससे मुसलमान का घर लूट लेवें और मुसलमान को मार दें और पत्तियाँ पांच गौ देहात में फ़ैल देवें । न पत्तियाँ फैलावें और न लूटमार के तो बेटी पर चढ़े ... । इससे बेहतर है कि मातारी के मुसलमान से ब्याह कर दें । ... तुरंत बंदूक समेत पल्टन आवेगा ।"[157]

(औ) काव्यात्मक शैली :

उपन्यासकार अपने उपन्यास को प्रभावशाली बनाने के लिए इस शैली का प्रयोग करता है । इस शैली के द्वारा वह किसी रूप का वर्णन या रोमांटिक दृश्यों को । गीतांजलि श्री ने प्रस्तुत उपन्यास में अनेक स्थलों पर इस शैली का सुन्दर एवं प्रभावशाली प्रयोग किया है । जैसे-

गीत :

लेखिका उपन्यास को सजीव और पाठकों को आकर्षित करने के लिए विभिन्न गीतों की रचना करती है । कभी रेडियो द्वारा तो, कभी टेलीविजन द्वारा या फिर पात्रों द्वारा । जैसे -

श्रुति गा रही है - "हमारे यहाँ के हैं दिन हरे-हरे । रात यहाँ की भीगी-भीगी ।"[158]

रिकार्ड बज रहा है - "वैष्णव जन तो तैने कहिए जे पीर पराई जाने रे ।"[159]

" सुमिरौं तेरो नाम

जीव दिया सब संसार

हे काजी करीम अरज करत इब्राहिम मेरे तो मौला

तुम बिन निस्तारे

सुमिरौं तेरो नाम ।"[160]

" जै जगदम्बे

देवी तेरी महिमा अपार

कर हमारा जोग सिद्धार

जै जगदम्बे"[161]

शेरो - शायरी :

लेखिका ने आलोच्य उपन्यास में शेरों और शायरी का भी मार्मिक प्रयोग किया है । यथा : -

"बस की मुश्किल है हर एक बात का आसाँ होना,

आदमी को भी मयस्सर इंसाँ होना ।"[162]

कविता :

"इस्लाम की बुनियाद पर यह देश हिंदुस्तान मिट रहा है ।

आ ही जाएगा एक दिन यहाँ इस्लाम का दस्तूर ।

हो जाएँगे एक दिन यहाँ से हिन्दू काफ़िर काफूर ।

बंधुओं चेत जाओ ।"[163]

(अं) विचारात्मक शैली :

इस शैली में गंभीर विषयों पर चिन्तन-मनन किया जाता है । इसमें बुद्धि और विचार की प्रमुखता होती है । हृदय पक्ष दबा रहता है । साहित्य-सृजन में अनुभूति के साथ, विचार श्रृंखला भी जरुरी होती है, हमारे सीमित भौतिक विचारों को व्यापक धरातल से जोड़ने के लिए । गीतांजलि श्री ने आलोच्य उपन्यास में बहुत से इसी प्रकार के विषयों को उठाया है, जो विभिन्न समस्याओं को उजागर करते हैं ।

जैसे : "क्यों नहीं लोग जानते कि सबसे पहले मुसलमान उत्तर नहीं, दक्षिण भारत में आए, मालाबार तट पर व्यापार के लिए, बिना हमला किये ? बिना खून-खराबे के वहीं साउथ में बसे और उधर के राष्ट्रकूट और चालुक्य

राजाओं ने, जो हिन्दू थे, उनका स्वागत किया । यहाँ तक की मिली-जुली शादियाँ हुईं और इनसे जो बच्चे हुए, उन्होंने 'बयासरा' के नाम से नई कौम बनाई । ये मेल था, झगड़ा नहीं । क्यों ये बातें आम जनता तक नहीं पहुँची हैं ? क्यों लोग भूल गए हैं ? कोई भुलवा रहा है ? वे खुद भूलना चाहते हैं ? सोचो...।"[164]

निष्कर्षत: 'हमारा शहर उस बरस' की भाषा उर्दू मिश्रित खड़ीबोली है । इनकी भाषा सहज, सरल, सुबोध, विषयानुकूल एवं पात्रानुकूल है । इनका शब्द-भण्डार अत्यंत विशद और व्यापक है । लेखिका ने मुहावरे और लोकोक्तियों का सफल प्रयोग किया है । अभिव्यक्ति के ढंग को शैली कहते हैं । आलोच्य उपन्यास में लेखिका ने वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, पत्रात्मक, संवादात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, आत्मकथात्मक, व्यंग्यात्मक, चित्रात्मक, संकेतात्मक, पूर्वदीप्ति, काव्यात्मक एवं विचारात्मक शैलियों का मार्मिक प्रयोग किया है ।

संदर्भ :

1. आदर्श हिंदी व्याकरण एवं रचना, रवि शर्मा, पृ. 1

2. उपन्यास की संरचना, डॉ. गोपाल राय, पृ. 33

3. हिंदी व्याकरण एवं रचना, रवि शर्मा, पृ. 29

4. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 10

5. वही, पृ. 10

6. वही, पृ. 10

7. वही, पृ. 10

8. वही, पृ. 10

9. वही, पृ. 10

10. वही, पृ. 14

11. वही, पृ. 14

12. वही, पृ. 14

13. वही, पृ. 24

14. वही, पृ. 39

15. वही, पृ. 40

16. वही, पृ. 40

17. वही, पृ. 40

18. वही, पृ. 40

19. वही, पृ. 40

20. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 41

21. वही, पृ. 42

22. वही, पृ. 42

23. वही, पृ. 44

24. वही, पृ. 45

25. वही, पृ. 46

26. वही, पृ. 54

27. वही, पृ. 54

28. वही, पृ. 54

29. वही, पृ. 54

30. आदर्श हिंदी व्याकरण एवं रचना, रवि शर्मा, पृ. 30

31. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 7

32. वही, पृ. 10

33. वही, पृ. 10

34. वही, पृ. 10

35. वही, पृ. 10

36. वही, पृ. 11

37. वही, पृ. 24

38. आदर्श हिंदी व्याकरण एवं रचना, रवि शर्मा, पृ. 31

39. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 126

40. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 125

41. वही, पृ. 174

42. वही, पृ. 174

43. वही, पृ. 116

44. वही, पृ. 24

45. वही, पृ. 24

46. वही, पृ. 38

47. वही, पृ. 48

48. वही, पृ. 49

49. आदर्श हिंदी व्याकरण एवं रचना, रवि शर्मा, पृ. 31

50. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 23

51. वही, पृ. 7

52. वही, पृ. 49

53. वही, पृ. 53

54. वही, पृ. 53

55. वही, पृ. 53

56. वही, पृ. 56

57. वही, पृ. 11

58. वही, पृ. 12

59. वही, पृ. 13

60. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 15

61. वही, पृ. 16

62. वही, पृ. 17

63. वही, पृ. 18

64. वही, पृ. 22

65. वही, पृ. 23

66. वही, पृ. 25

67. वही, पृ. 26

68. वही, पृ. 31

69. वही, पृ. 43

70. वही, पृ. 35

71. वही, पृ. 36

72. वही, पृ. 17

73. वही, पृ. 17

74. वही, पृ. 17

75. वही, पृ. 25

76. वही, पृ. 32

77. वही, पृ. 21

78. वही, पृ. 37

79. वही, पृ. 37

80. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 61

81. वही, पृ. 79

82. वही, पृ. 85

83. वही, पृ. 127

84. वही, पृ. 7

85. वही, पृ. 7

86. वही, पृ. 20

87. वही, पृ. 20

88. वही, पृ. 21

89. वही, पृ. 22

90. वही, पृ. 24

91. वही, पृ. 110

92. वही, पृ. 30

93. वही, पृ. 39

94. वही, पृ. 40

95. वही, पृ. 41

96. वही, पृ. 82

97. वही, पृ. 83

98. वही, पृ. 7

99. वही, पृ. 7

100. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 27

101. वही, पृ. 29

102. वही, पृ. 44

103. वही, पृ. 44

104. वही, पृ. 7

105. वही, पृ. 7

106. वही, पृ. 9

107. वही, पृ. 9

108. वही, पृ. 15

109. वही, पृ. 19

110. वही, पृ. 47

111. वही, पृ. 70

112. वही, पृ. 125

113. वही, पृ. 232

114. वही, पृ. 34

115. वही, पृ. 45

116. वही, पृ. 45

117. वही, पृ. 56

118. वही, पृ. 58

119. वही, पृ. 62

120. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 62

121. वही, पृ. 66

122. वही, पृ. 70

123. वही, पृ. 85

124. वही, पृ. 90

125. वही, पृ. 105

126. वही, पृ. 121

127. वही, पृ. 41

128. वही, पृ. 58

129. मैथिलि लोक साहित्य का अध्यन, ताराकान्त मिश्र, पृ. 31

130. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 68

131. वही, पृ. 91

132. वही, पृ. 310

133. वही, पृ. 25

134. वही, पृ. 108

135. वही, पृ. 132

136. वही, पृ. 158

137. वही, पृ. 192

138. वही, पृ. 27

139. वही, पृ. 11

140. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 10

141. वही, पृ. 16

142. वही, पृ. 27

143. वही, पृ. 64

144. वही, पृ. 29

145. वही, पृ. 51

146. वही, पृ. 69

147. वही, पृ. 140

148. वही, पृ. 81

149. वही, पृ. 52

150. वही, पृ. 10

151. वही, पृ. 60

152. वही, पृ. 165

153. वही, पृ. 12

154. वही, पृ. 191

155. वही, पृ. 66

156. वही, पृ. 8

157. वही, पृ. 89

158. वही, पृ. 31

159. वही, पृ. 46

160. हमारा शहर उस बरस, गीतांजलि श्री, पृ. 104

161. वही, पृ. 117

162. वही, पृ. 108

163. वही, पृ. 51

164. वही, पृ. 68

उपसंहार

साहित्य समाज का दर्पण है । साहित्य हमें वही देता है, जो समाज में घट रहा होता है । जब कोई साहित्यकार लिखता है, तो वह स्वयं को उसी परिवेश से जोड़ता है, जहाँ से उसका जीवन प्रारम्भ होता है और अपने भोगे और देखे हुए सच को वह कल्पना का सहारा लेकर रचना में उतारता है । समय के साथ समाज के स्वरुप में भी परिवर्तन होता रहा है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज में ही वह अपने जीवन का आधार तय कर जीवन के आगे की प्रक्रिया तय करता हुआ, समाज में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाता है । गीतांजलि श्री का नाम समकालीन कथा-साहित्य में बहुचर्चित है । प्रखर चेतना की संवाहिका गीतांजलि श्री के पास अनुभव का विपुल भण्डार है । समकालीन यथार्थ को उन्होंने अपने कथा-साहित्य में सूक्ष्म भाषिक संवेदनाओं के साथ अनेक रूपों में अन्वेषित किया है ।

गीतांजलि श्री का जन्म 12 जून, 1957 को मैनपुरी (उत्तर प्रदेश) में हुआ । इनकी माता का नाम श्री कुमारी पांडेय और पिता का नाम अनिरुद्ध पांडेय है । इनके पिता उत्तर प्रदेश में सिविल सेवा में थे, इसलिए इनकी आरंभिक शिक्षा उत्तर प्रदेश के विभिन शहरों में हुई । इन्होंने कला स्नातक लेडी श्रीराम कॉलेज, दिल्ली एवम् स्नातकोत्तर (इतिहास) जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली से किया । इन्होंने महाराजा सयाजी राव विश्वविद्यालय, बड़ौदा (गुजरात) से 'प्रेमचंद और उत्तर भारत के औपनिवेशिक शिक्षित वर्ग' विषय पर पी-एच.डी की उपाधि प्राप्त की ।

गीतांजलि श्री को साहित्यिक सेवाओं के लिए यू. के. कथा सम्मान (1995), इंदु शर्मा कथा सम्मान (1998), हिंदी अकादमी साहित्यकार सम्मान (2001), द्विजदेव सम्मान (2004), कृष्ण बलदेव वैद्य सम्मान (2013) आदि सम्मानों से नवाजा गया है । गीतांजलि श्री विविधोन्मुखी प्रतिभा की धनी हैं । इनके कथा-सहित्य में जीवन और उसके विविध पहलुओं के मध्य अद्भुत तारतम्य है । वे अपनी रचनाओं को नए अंदाज में लिखती हैं । गीतांजलि श्री ने अपने लेखन की शुरुआत कहानी से की, उनकी पहली कहानी 'बेलपत्र' (1987)

'हंस' पत्रिका में प्रकाशित हुई । इनके अब तक चार उपन्यास प्रकाशित हैं - 'माई' (1993), 'हमारा शहर उस बरस' (1998), 'तिरोहित' (2001), 'खाली जगह' (2006) । इनके अलावा तीन कहानी-संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं- 'अनुगूँज' (1991), 'वैराग्य' (1999), 'यहाँ हाथी रहते थे' (2012)। गीतांजलि श्री ने सम्पादन की दिशा में भी सराहनीय कार्य किया है । उनकी सम्पादित कृति है - 'अज्ञेय कहानी संचयन' (2012) । सम्प्रति वे स्वतंत्र लेखन कर रही हैं ।

गीतांजलि श्री का कथा-साहित्य उच्चतर उद्देश्यों को सिद्ध करता है । उन्होंने संकीर्णता, अन्याय और अज्ञान के भीतर से मनुष्य को शांति, प्रेम और आनंद की ओर ले जाने का सद्प्रयास किया है । अपनी रचनाओं में उन्होंने जिन जीवन-मूल्यों की स्थापना की है, वे जीवन के शाश्वत मूल्य हैं । उनके कथा साहित्य में निहित जीवन-मूल्य उनकी रचनाओं को कालजयी बनाते हैं ।

गीतांजलि श्री का प्रसिद्ध उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' सन् 1998 में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ । इस उपन्यास में न तो काल निर्धारित है और न ही स्थान परिभाषित है । 'हमारा शहर' कोई भी हो सकता है और 'उस बरस' कभी भी हो सकता है । इसमें जो निश्चित और निर्धारित है वह है - कथा में दंगों का वर्णन, विवरण तथा उस विवरण पर वाद-विवाद ।

'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास सन् 1980 से 1998 तक की कालावधि में लिखा गया है । इस उपन्यास में एक शहर है । इस शहर में एक मठ और एक विश्वविद्यालय है । ये दोनों ही संस्थाएँ साम्प्रदायिकता को हवा देती हुई, रहस्यपूर्ण और आतंक से भरी हुई दुनिया का सृजन करती हैं । इस उपन्यास के सभी पात्र बुद्धिजीवी हैं । वे अनेक प्रकार के तर्क प्रस्तुत करते हैं । उनकी बहस से साम्प्रदायिकता को जड़ से मिटा देने के लिए कई सुझाव आते हैं, लेकिन समाज के विशिष्ट बुद्धिजीवी, जो अपने को कबीर की तरह न हिन्दू न मुस्लिम की जमीन पर खड़ा मानते थे । ऐसे लोग भी सम्प्रदाय के विरुद्ध लड़ते-लड़ते उसी साम्प्रदायिक मानसिकता से ग्रस्त हो जाते हैं । हनीफ़ और शरद मित्र और सहयोगी हैं । उनमें हिन्दू-मुस्लिम का भाव है । श्रुति हनीफ़ की पत्नी है । वह

हनीफ़ से विवाह करके भी हिन्दू है और हनीफ़ श्रुति का सर्वस्व होकर भी मुसलमान है । ददद्दू इस उपन्यास में धर्म-निरपेक्ष पात्र की भूमिका निभाता है ।

वास्तव में, आज कुछ बुद्धिजीवियों ने छद्म व्यक्तित्व का आवरण पहन रखा है । समाज की समस्याओं से उनका कोई मतलब नहीं है, जब कभी उनको मौका मिलता है, इन सब के खिलाफ भाषण देने का तो उनके लिए बायें हाथ का खेल है, परन्तु जब उनके कर्तव्य की बारी आती है, तो सबसे पहले वे अपने हाथ खड़े कर देता हैं । जितना ये अपने अधिकारों के प्रति सजग हैं, उतना ही वे अपने कर्त्तव्य के प्रति उदासीन हैं । गीतांजलि श्री ने इस उपन्यास में देश के तथाकथित बुद्धिजीवियों की दोहरी मानसिकता को भी बेनकाब किया है । अगर हमारे समाज में बुद्धिजीवियों ने अपनी भूमिका का निर्वाह निष्पक्ष रूप से किया होता, तो आज विश्वविद्यालय में जिस तरह की राजनीति हो रही है, वह इस कदर अपनी जड़ें शिक्षा के क्षेत्र में नहीं फैला सकती थी, जैसा कि इस उपन्यास में दर्शाया गया है कि हनीफ़ विश्वविद्यालय में वरिष्ठ प्राध्यापक होकर भी विभागाध्यक्ष नहीं बनता और शरद अवसर मिलते ही विभागाध्यक्ष बन जाता है ।

भारतीय समाज की साम्प्रदायिकता को सीधे धर्म से जोड़कर देखा जाता है । भारत की धर्म परायण जनता को धर्म के नाम पर जितनी आसानी से भड़काया जा सकता है, उतना अन्य किसी आधार पर नहीं । भारतीय समाज में धर्म का राजनीतिकरण बड़ी तेज गति से हो रहा है । धर्म के नाम पर आम जनता के विश्वास, धर्म भीरुता का लाभ उठाने वाले पंडित, मौलवी जैसे लोग अपने स्वार्थ-सिद्धि के लिए धर्म के घेरे को संकुचित कर रहे हैं । जब उसका घेरा संकुचित होने लगता है, तब वह साम्प्रदाय में बदल जाता है । साम्प्रदायिक आधार पर विभाजित दो गुटों के बीच दंगे और मारकाट का मुख्य कारण समाज में मौजूद संकीर्ण धार्मिक मानसिकता है, जो हिन्दू और मुस्लिम दोनों को आपस में लड़वाती है । लेखिका ने इस उपन्यास में हिन्दू-मुस्लिम दंगों के पीछे धर्म की राजनीति को कारण बताया है, जो कि मठ द्वारा संचालित होती है । हमेशा ही साम्प्रदायिक दंगों में धार्मिक उन्माद और धर्मान्धता ने महत्वपूर्ण भूमिका

निभायी है । धर्म के नाम पर अधर्म करने के लिए धर्म भीरु जनता को गुमराह किया जाता है ।

वर्तमान में, जीवन मूल्यों में परिवर्तन का एक मुख्य कारण हमारी शिक्षा प्रणाली भी है । वर्तमान शिक्षा प्रणाली विद्यार्थी के बौद्धिक विकास पर अधिक बल देती है, न की नैतिक बोध पर । नैतिक बोध की इच्छा जब विद्यार्थी में पैदा स्वयं हो, तो उसे सही-गलत, उचित-अनुचित का भान हो जाता है । वह किसी भी प्रकार के स्वार्थी एवं छद्म व्यक्ति के भड़काने से समाज में उपद्रव नहीं करता । लेखिका ने आलोच्य उपन्यास के द्वारा यह बताने की कोशिश की है कि किस प्रकार पढ़े-लिखे व्यक्ति भी छद्म व्यक्तियों के बहकावे में आ कर, अपने ही शिक्षक के घर पर हमला कर देते हैं । जीवन-मूल्य हमें समाज में मानव व्यवहार को समझने के साथ उसका सम्मान करना भी सिखातें हैं ।

वर्तमान समय में हमारा देश प्रगति की ओर अग्रसर है । इस प्रगति में नारियों का भी उतना ही योगदान है, जितना पुरुषों का । नारी हर क्षेत्र में पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधे मिलाकर हर कार्य को सफल रूप से कर रही है । वह किसी भी रूप में पुरुष से कम नहीं है । ऐसी स्थिति में हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि महिलाओं में जिस सीमा तक नैतिकता का पतन हुआ है, उसके प्रति उन्हें सचेत कर, उनमें जीवन की गरिमा को स्थापित करने की प्रेरणा दे सकें । श्रुति और बेबरली साम्प्रदायिकता के खिलाफ आवाज उठाती हैं, वे दोनों ही समाज के प्रति संवेदनशील हैं । वे समाज के सामने साम्प्रदायिकता के सच को सामने लाने का कार्य करती हैं ।

मृत्यु जीवन की लय में बसी हुई एक सहज सच्चाई है । प्राणी जन्म लेता है और उसे मरना भी होता है, यह जीवन का शाश्वत सत्य है । हमारे समाज में कुछ स्वार्थी लोग केवल अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए इस बात का फायदा लेते हैं । वे लोगों को उनकी मृत्यु का भय दिखाकर अपना उल्लू सीधा करते हैं । शहर में अफवाह फ़ैल गई है कि पानी की सप्लाई में किसी ने जहर मिला दिया । किस संप्रदाय ने यह किया, किसी को भी पता नहीं । जैसे ही लोगों को इसके बारे में संदेह होता, वे घबरा जाते हैं । शहर में अशांति और मृत्यु का भय छा जाता है । लोग जानने की कोशिश ही नहीं करते की इन बातों

में कितनी सच्चाई है । बिना सोचे समझे एक दूसरे के खिलाफ वे अपने मन में बदले की भावना पैदा कर लेते हैं । इस' उपन्यास में लेखिका ने पाठकों को मृत्यु के भय से भी अवगत करवाया है कि लोग सड़कों पर ही नहीं बल्कि अपने घरों में भी सुरक्षित नहीं हैं । हमेशा उन्हें एक-दूसरे संप्रदाय के लोगों से मृत्यु का भय बना रहता हैं ।

'हमारा शहर उस बरस' की भाषा उर्दू मिश्रित खड़ीबोली है, इसकी भाषा विषयानुकूल एवं पात्रानुकूल है । गीतांजलि श्री का शब्द-भण्डार अत्यंत विशद और व्यापक है । उन्होंने आलोच्य उपन्यास में तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज, ध्वन्यात्मक, रूढ़, यौगिक, संकर आदि शब्दों का प्रचुर प्रयोग किया है । वे शब्दों को अर्थ की सम्पूर्णता के साथ प्रस्तुत करती हैं । शब्दों के समूह को वाक्य कहते है । प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने सरल, संयुक्त, मिश्रित, संदेहवाचक एवं विस्मयबोधक वाक्यों का प्रयोग किया है । मुहावरों और लोकोक्तियाँ के कुशल प्रयोग से इस उपन्यास के भाव एवं चित्रों में एक अनोखापन तो आया ही है, साथ ही अभिव्यंजना की धार भी तेज हो गई है । प्रतीक और बिम्ब के प्रयोग से भाषा के सौन्दर्य में अभिवृद्धि हुई है ।

अभिव्यक्ति के ढंग को शैली कहते हैं । गीतांजलि श्री ने आलोच्य उपन्यास में विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है - वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, पत्रात्मक, संवादात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, आत्मकथात्मक, व्यंग्यात्मक, चित्रात्मक, संकेतात्मक, पूर्वदीप्ति, काव्यात्मक एवं विचारात्मक आदि । इन शैलियों के प्रयोग से आलोच्य उपन्यास प्रभाव पूर्ण और मर्मस्पर्शी बन गया है । वर्णनात्मक शैली का प्रयोग उन स्थलों पर किया गया है, जहाँ किसी दृश्य, मेले, जुलूस आदि का वर्णन है । आत्मकथात्मक शैली में लेखिका दद्दू के द्वारा उनकी बीती जिन्दगी के कुछ पक्षों को उजागर करती है । संवाद-शैली का प्रयोग उपन्यास की कथावस्तु को सजीव बनाने के लिए किया है । मनोविश्लेषणात्मक शैली के माध्यम से लेखिका ने उपन्यास के पात्रों की मनोदशा को प्रभावशाली रूप में व्यक्त किया है । व्यंग्यात्मक शैली के द्वारा गीतांजलि श्री ने बहुत-सी बातों को पाठकों के समक्ष सहजता से रखा, जिसे वे सीधे तौर से नहीं कह

सकती थीं । इनकी लेखनी की विशेषता यह है कि जिन शैलियों का उपन्यास में प्रयोग किया गया हैं, वह सहज व स्वाभाविक है ।

निष्कर्षत: यह उपन्यास साम्प्रदायिकता के बौद्धिक-विमर्श को केंद्र में रखकर लिखा गया है । लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास में हिन्दू-मुस्लिम दंगों पर बौद्धिक विमर्श के मध्य, सदियों से चले आ रहें, दोनों सम्प्रदायों (हिन्दू-मुस्लिम) के संबंधों को विश्लेषित किया है और भारतीय सभ्यता की गंगा-जमुनी संस्कृति की हिमायत की है । लेखिका मानती है कि यदि ये दोनों (हिन्दू और मुस्लिम) ईमानदारी से पारस्परिक सौहार्द और स्नेह का वातावरण पैदा करने का सक्रिय प्रयास करें, तो कोई कारण नहीं कि इस समस्या का समाधान न हो सके ।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ :

1. गीतांजलि श्री, हमारा शहर उस बरस, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998

सहायक ग्रंथ :

1. अभय कुमार दूबे, साम्प्रदायिकता के स्रोत, विनय प्रकाशन, दिल्ली, 1993
2. इन्दु प्रकाश पाण्डेय, हिंदी के अधुनातन नारी उपन्यास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1979
3. गीतांजलि श्री, अनुगूँज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1991
4. गीतांजलि श्री, अज्ञेय कहानी संचयन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
5. गीतांजलि श्री, खाली जगह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006
6. गीतांजलि श्री, तिरोहित, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007
7. गीतांजलि श्री, माई, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1993
8. गीतांजलि श्री, यहाँ हाथी रहते थे, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
9. गीतांजलि श्री, वैराग्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1999
10. गुलाबराय, हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास, साहित्य भण्डार, आगरा, 1967
11. गोपाल राय, हिंदी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,2000
12. ज्योति जोशी, उपन्यास की समकालीनता, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2007
13. डॉ. अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012

14. डॉ. तारा कान्त मिश्र, मैथिलि लोक साहित्य का अध्ययन, नेशनल पब्लिशिंग, हाउस, नई दिल्ली, 2008
15. डॉ. पूरनचंद टंडन, हिंदी साहित्य का इतिहास, जगतराम एंड संस, दिल्ली, 2002
16. डॉ. मोहिनी शर्मा, हिंदी उपन्यास और जीवन-मूल्य, साहित्यागार प्रकाशन, जयपुर, 1986
17. डॉ. विनोदिनी श्रीवास्तव, निराला साहित्य में जीवन-दर्शन, सुलभ प्रकाशन, लखनऊ, 1988
18. डॉ. सुरेन्द्र वर्मा, भारतीय जीवन मूल्य, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी, 1996
19. डॉ. हुक्म चंद राजपाल, हिंदी साहित्य का इतिहास, डिसेंट पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006
20. दिलीप मेहरा, हिंदी महिला अत्याचारों के साहित्य में नारी - विमर्श, क्लासिक पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 2012
21. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000
22. राम आहूजा, भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2000
23. रामचंद्र तिवारी, हिंदी गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2009
24. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2005
25. रवि शर्मा, आदर्श हिंदी व्याकरण एवं रचना, आधुनिक पुस्तक उद्योग, नई दिल्ली, 1992
26. विजय मोहन सिंह, बीसवीं शताब्दी का हिंदी साहित्य, राज कमल प्रकाशन, 2005
27. विपिन, आधुनिक भारत में साम्प्रदायिकता, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1996
28. विश्वम्भर मानव, उन्नीसवीं शताब्दी के उपन्यासकार, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, 2001

29. वी. के. अब्दुल जलाल, समकालीन हिंदी उपन्यास : समय और संवेदना, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2006
30. शशिकला राय, कथा समय सृजन और विमर्श, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली,2008
31. शशि भूषण द्विवेदी, संपादक - गीतांजलि श्री की प्रतिनिधि कहानियाँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010

कोश :

1. कालिका प्रसाद, बृहत हिंदी कोश, ज्ञानमण्डल लिमिटेड , वाराणसी, जुलाई 1984
2. धीरेन्द्र वर्मा, हिंदी साहित्य कोश (भाग - 1,2), ज्ञानमंडल प्रकाशन, वाराणसी, 2000
3. बदरीनाथ कपूर, अंग्रेज़ी - हिंदी कोश, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1999
4. मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव, ज्ञानशब्द कोश, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, 1986
5. रामचन्द्र पाठक, भार्गव आदर्श हिंदी शब्दकोश, भार्गव बुक डिपो, वाराणसी, 1984
6. रामचंद्र वर्मा, मानक हिंदी कोश, हिंदी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग, 1978
7. वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत - हिंदी कोश, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, दिल्ली, 1989
8. वामन शिवराम आप्टे, संक्षिप्त-हिंदी कोश, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1969

पत्रिकाएँ :

1. तद्भव, संपा. - अखिलेश, दिल्ली
2. वर्तमान साहित्य, संपा. - नमिता सिंह, अलीगढ़
3. समीक्षा, संपा. - सत्यकाम, नई दिल्ली
4. हंस, संपा. - राजेन्द्र यादव, नई दिल्ली

अनुसंधित्सु का विवरण

नाम	: हेमलता
शिक्षा	: बी.एड., एम.एड., एम.ए.(हिंदी)
विभाग	: हिंदी
शोध-प्रबंध का शीर्षक	: 'हमारा शहर उस बरस' : कथ्य और शिल्प'
प्रवेश शुल्क के भुगतान की तिथि	: 07.08.2015
शोध प्रस्ताव की संस्तुति	
(i) बी. ओ. एस.	: 13.04.2016
(ii) स्कूल बोर्ड	: 19.04.2016
पंजीयन संख्या	: MZU/M.Phil./304 of 19.04.2016

अध्यक्ष

हिंदी-विभाग

मिज़ोरम विश्वविद्यालय

आइज़ॉल